पंचमेरु विधान

पंचमेरु विधान

आशीर्वाद

गणाधिपति गणधराचार्य श्री कुन्थुसागरजी गुरुदेव
वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनंदीजी गुरुदेव

संपादन

प्रज्ञायोगी दिगम्बर जैनाचार्य श्री गुप्तिनंदीजी गुरुदेव

रचनाकार

गणिनी आर्यिका आस्थाश्री माताजी

प्रकाशक

श्री धर्मतीर्थ प्रकाशन

विषय सूची

क्र.सं.	विषय	पृ. सं.
1.	आशीर्वाद–ग.ग.आचार्य कुंथुसागरजी	7
2.	शुभाशीर्वाद एवं शुभकामनायें–आचार्य कनकनन्दीजी	8
3.	सम्पादकीय–आशीर्वाद – आचार्य गुप्तिनन्दीजी	10
4.	जैन धर्म में भावना का महत्त्व – मुनि महिमासागरजी	15
5.	धर्म कर्म निवर्हणम् – मुनि सुयशगुप्तजी	17
6.	भादो भी होगा भक्ति का सावन – मुनि चन्द्रगुप्तजी	18
7.	स्व कथ्यम् – गणिनी आर्यिका क्षमाश्री माताजी	19
8.	तीर्थंकर पद की हेतू, सोलहकारण भावना– गणिनी आर्यिका आस्थाश्री माताजी	20
9.	विधान मंडल	37
10.	विनय पाठ	40
11.	पूजा आरम्भ	41
12.	नित्यमह पूजन–गणिनी आर्यिका राजश्री माताजी	46
13.	श्री चौबीस तीर्थंकर पूजन–आचार्य गुप्तिनंदीजी	50
14.	ऋद्धि मंत्र	53

श्री पंचमेरु विधान

55.	श्री पंचमेरु समुच्चय विधान पूजा	236
56.	श्री सुदर्शन मेरु पूजा	241
57.	श्री विजय मेरु पूजा	248
58.	श्री अचल मेरु पूजा	255
59.	श्री मंदर मेरु पूजा	262
60.	श्री विद्युन्माली मेरु पूजा	269

final 14-11-2022

61.	समुच्चय जयमाला	276
62.	प्रशस्ति	278
63.	पंचमेरु की आरती	279
64.	पंचमेरु चालीसा	280

आशीर्वाद

पुण्य ही जीव की सद्गति कराता है, सद्गति से मनुष्य को मोक्ष प्राप्त होता है, सच्चा सुख उसी को कहते हैं। संसारी जीव को सच्चे सुख के लिये ही प्रयत्न करना चाहिए, आचार्यों ने इसीलिये देवपूजा का विधान गृहस्थों के लिये अनिवार्य किया है। सद् गृहस्थ को प्रतिदिन जिनपूजा करना चाहिए। द्रव्यसहित भावपूजा करना चाहिये, पूजा पुण्यानुबंधी पुण्य कमाने के लिये है। **आचार्य श्री गुप्तिनंदी जी** ने त्रिकाल चौबीसी और पंचकल्याणक विधान लिखे हैं और **गणिनी आर्यिका आस्थाश्री माताजी** ने सोलहकारण, दशलक्षण, पंचमेरु, नंदीश्वर, रविव्रत, मोक्षशास्त्र, णमोकार, एकीभाव एवं चंदन षष्ठी विधान आदि आठ विधानों को लिखा है, व्रत विधान करने से जीव को परम्परा से मुक्ति प्राप्ति होती है, गणिनी आर्यिका आस्थाश्री माताजी का परिश्रम कब सार्थक होगा, जब सद्ग्रहस्थ व्रत करें, विधान करें। आप सभी विधानों को करके अवश्य पुण्य लाभ उठावें, ऐसा मेरा कहना है। गणिनी आर्यिका आस्थाश्री माताजी को, प्रकाशक को मेरा आशीर्वाद।

-ग.ग. कुन्थुसागर

शुभाशीर्वाद एवं शुभकामनायें

राग – सुवर्ण पात्री मंगल आरती.. मराठी राग (चौपाई)

(तीर्थंकरों का सामान्य वर्णन)

आत्म उद्धारक विश्व प्रबोधक अनन्त ज्ञान सुख वीर्यवान्।
अनन्त दर्श के स्वामी भगवन्, घातीकर्म नाशक अरहन्॥ टेक॥

सोलह भावना बल पर बनते तीर्थंकर केवली महान्।
अतिशय युक्त पञ्चकल्याणों से होते हैं प्रभु शोभितवान्॥1॥

गर्भ से पूर्व होती रत्नवृष्टि माता देखती स्वप्न महान्।
देवों के द्वारा होती पूजित जिनेश माता पुण्य से जान॥2॥

जन्म होने पर होता अभिषेक पाण्डुक शिला पर महान्।
हजार आठ कलश के द्वारा देव करे उत्सव महान्॥3॥

राजकुमार राजा चक्री बन करते प्रजापालन श्रीमान्।
कोई बाल ब्रह्मचारी होते कोई विवाह भी करते जान॥4॥

बाह्य अन्तःकरणों से जब होता वैराग्य सौभाग्य जान।
लौकान्तिक करते अनुमोदन दिव्य पालकी से वनगमन॥5॥

सिद्धों को करके सुमिरन पञ्चमुष्टि केशलोंच करें महान्।
अन्तरंग-बाह्य परिग्रह तजकर निर्ग्रन्थ रूप धरे महान्॥6॥

गर्भ से होते त्रिज्ञानधारी क्षायिक सम्यग्दृष्टि महान्।
दीक्षा से होता मनःपर्यय भी चौंसठ ऋद्धि अलौकिक जान॥7॥

बाह्य-आभ्यन्तर तपस्या करते सात्विक आहार लेते जान।
इसी से होते पञ्च आश्चर्य आहारदान का गुण बखान॥8॥

शुक्ल ध्यान से श्रेणी आरोहण करके घाती कर्म करें हनन।
अनन्त चतुष्टय धारी बनकर साक्षात् तीर्थेश जान॥9॥

समवशरण की रचना होती देवकृत अति मनोहर/(चमत्कार)।
गन्धकुटी बाहर सभा मध्ये विराजमान होते भगवान्/(जिनवर)॥10॥

सर्वभाषामयी श्रीवाणी खिरे श्रवण करे पशु देव नर।
गणधर उसे गुन्थित करते द्वादश जिनवाणी का सार॥11॥

हमारी संघस्था उदीयमाना कवियित्री **गणिनी आर्यिका श्री आस्थाश्री** के द्वारा रचित **'सोलहकारण, दशलक्षण, पंचमेरु, नंदीश्वर, रविव्रत, तत्त्वार्थ सूत्र, णमोकार, एकीभाव एवं चंदन षष्ठी विधान'**, ये अनेक विधान लिखे हैं उनका सदुपयोग करके विश्व मानव सातिशय पुण्यार्जन करें एवं परम्परा से मोक्ष प्राप्त करें ऐसी मेरी शुभकामनायें हैं। **गणिनी आर्यिका आस्थाश्री** भी रत्नत्रय की साधना एवं सोलहकारण भावना के द्वारा स्व-पर विश्वकल्याण करते हुये स्वात्मोपलब्धि करें ऐसा शुभाशीर्वाद एवं शुभकामनायें सह-

-आचार्य कनकनंदी
खाखड (उदयपुर) राज.
28-5-2012

सम्पादकीय-आशीर्वाद

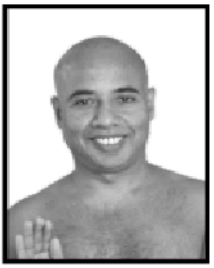

सोलहकारण दिव्य भावना, तीर्थंकर पद की दातार।
दशलक्षण आतम के लक्षण, करते पापों का परिहार॥
उनको भायें निशदिन ध्यायें, करने निज आतम उद्धार।
उनके धारक श्री जिन मुनि को, करते वंदन बारम्बार॥
पंचमेरु और नंदीश्वर के, जिनवर का हम करते ध्यान।
रविव्रत के श्री पार्श्वनाथ से, हो जाये मेरा उत्थान॥

भावनायें अनेक प्रकार की होती हैं। जैसे–सद्भावना, दुर्भावना, प्रशस्त भावना, अप्रशस्त भावना। प्रशस्त भावनाओं में बारह भावना, मेरी भावना, सोलहकारण भावनाओं आदि का समावेश होता है। इन सभी भावनाओं में सोलहकारण भावना सातिशय पुण्य भावना है।

जीवकाण्ड, कर्मकाण्ड आदि जैन आगम के अनुसार यदि कोई संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तक, भव्य पुण्यात्मा जीव किसी तीर्थंकरादि केवली या श्रुतकेवली के पादमूल में विधिबद्ध ढंग से इन सोलहकारण भावनाओं का चिंतवन करता है तो वह तीर्थंकर पुण्य प्रकृति का बंध कर सकता हैं।

इसके अतिरिक्त षोडशकारण की व्रत कथा के अनुसार मुनियों के प्रति दुर्व्यवहार करने का फल भोगने वाली कुरूपा निंदनीया कालभैरवी कन्या ने पश्चात्ताप के साथ इस व्रत को सम्पन्न किया। जिससे मुनि निंदा के पाप से बचकर उसी कन्या ने आगे स्त्रीलिंग को छेदन कर, सीमंधर तीर्थंकर के महान् पद को प्राप्त किया। अर्थात् मुनि निंदा के प्रायश्चित्त हेतु भी यह व्रत करना चाहिए।

वर्ष में तीन बार आने वाला यह पर्व हमें दिशाबोध देता है कि तीर्थंकर कैसे तीर्थंकर बने ?

हमारे आदर्श क्या हो ? साधारण मानव भी आगे कैसे तीर्थंकर बन सकता है।

इसी प्रकार दशलक्षण धर्म, आत्मा का धर्म है। जैन संस्कृति में दशलक्षण पर्व का विशेष महत्त्व है। पर्वों में महापर्व, पर्वाधिराज पर्यूषण को माना गया है। पर्यूषण पर्व भी वर्ष में तीन बार आता है किन्तु भाद्रपद मास में आने वाला दशलक्षण पर्व जैन समाज में विशेष रूप से मनाया जाता है। सम्पूर्ण भारतवर्ष के जैन धर्मावलम्बी श्रावक चाहे देश में हो या विदेश में रहे। वह अनिवार्य रूप से भाद्रपद मास के पर्यूषण पर्व पर

अपनी सांसारिक क्रियाओं से निवृत्त होकर ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए दस दिनों तक नियम संयम के साथ दशलक्षण धर्म की महा–आराधना करते हैं।

धूमधाम से गीत, संगीत, वाद्ययंत्रों के साथ पूजा विधान करते हैं। इसलिए समय–समय पर हमारे आचार्यों, मुनिराजों, आर्यिका माताजी व श्रावकों ने कभी प्राकृत भाषा में, कभी संस्कृत में कभी ढुढ़ारी भाषा में तो कभी हिन्दी में छोटे या बड़े रूप में अनेक प्रकार से सोलहकारण व दशलक्षण विधान की रचना की है।

इसी श्रृंखला में **आर्यिका आस्थाश्री माताजी** ने अपनी भक्ति काव्य कला का सद्पयोग करते हुए **'सोलहकारण, दशलक्षण, पंचमेरु, नंदीश्वर, रविव्रत, तत्त्वार्थ सूत्र, णमोकार, एकीभाव एवं चंदन षष्ठी विधान'** को लिखा है। माताजी एक ऐसी पुण्यात्मा है जिन्होंने मात्र तेरह वर्ष की बाल्यावस्था में घर, परिवार त्याग कर ''आर्यिका विशालमति माताजी'' के मार्गदर्शन में अपनी अध्यात्म यात्रा प्रारम्भ की। तत्पश्चात् जैनागम का गहन अध्ययन करने के लिये **'वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनन्दीजी गुरुदेव'** का पावन सान्निध्य प्राप्त किया। धर्मपिता आचार्य गुरुदेव ने जहाँ आपको शास्त्राभ्यास कराया।

वहीं मर्यादा श्रमणमोत्तम आचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव ने अपनी प्रथम शिष्या की आर्यिका दीक्षा अपने दीक्षा गुरु **गणाधिपति गणधराचार्य श्री कुंथुसागरजी गुरुदेव** से करवायी और इस तरह ब्रह्मचारिणी कुमारी लीला 17 फरवरी, 1997 को गुजरात प्रांत के अहमदाबाद नगर में **आर्यिका आस्थाश्री** बन गई। सन् 1994 से निरन्तर संघ में रहते हुए आपकी अध्यात्म साधना निरन्तर चलती रही।

दोहा– पंचमेरु के जिन भवन, उनमें जिन भगवान।
उनको ध्याऊँ रात–दिन, दर्शन दो भगवान॥

जैन संस्कृति में पंचमेरु का महत्त्वपूर्ण स्थान है। ढाई द्वीप में पाँच मेरु होते हैं। जम्बूद्वीप के बीचोंबीच प्रथम सुमेरु पर्वत है। धातकी खण्ड द्वीप के पूर्व और पश्चिम भाग में विजय व अचल मेरु हैं। पुष्करार्द्ध द्वीप के पूर्व व पश्चिम में मन्दर व विद्युन्माली मेरु हैं।

इनमें से प्रथम सुदर्शन मेरु की ऊँचाई एक लाख चालीस योजन है व अन्य चार मेरु पर्वतों की ऊँचाई चौरासी हजार योजन बतायी है। इन पाँच मेरुओं में (1) भद्रशाल (2) नन्दन (3) सौमनस (4) पाण्डुक नामक चार वन हैं। चारों वनों की चारों दिशाओं में चार–चार जिनालय हैं। प्रत्येक जिनालय में 500 धनुष ऊँची 108–108 जिन प्रतिमायें हैं। इस प्रकार एक मेरु के चारों वनों के 16 चैत्यालयों

की 108-108 जिन प्रतिमायें मिलाने पर एक मेरु की 1728 जिनप्रतिमायें होती हैं। जैन शास्त्रों में पाँचों मेरु की कुल आठ हजार छह सौ चालीस जिन प्रतिमायें बनायी हैं। उनमें सभी प्रतिमाओं में प्रत्येक के समीप सर्वाण्ह यक्ष, सनत्कुमार यक्ष व श्रीदेवी और श्रुतदेवी की प्रतिमा भी शाश्वत स्थित है। प्रत्येक जिन प्रतिमा अष्ट महाप्रतिहार्य व अष्ट मंगल द्रव्य से विभूषित है।

पाँचों मेरु के पाण्डुक वनों की चार विदिशाओं में चार-चार शिलायें हैं। उनके क्रम से (1) पाण्डुक शिला (2) पाण्डुकम्बला शिला (3) रक्ता शिला और (4) रक्तकम्बला शिला नाम हैं। इन शिलाओं पर निर्धारित (भरत, ऐरावत, पूर्व, पश्चिम विदेह) क्षेत्र के बाल तीर्थंकरों का जन्माभिषेक होता है।

हम इसे प्रथम सुमेरु पर्वत से समझते हैं। सुमेरु के पाण्डुक वन की ईशान दिशा में स्थित पाण्डुक शिला पर भरत क्षेत्र के तीर्थंकरों का, आग्नेय दिशा में स्थित पाण्डुकम्बला शिला पर पश्चिम विदेह के तीर्थंकरों का, नैऋत्य दिशा में स्थित रक्ता शिला पर ऐरावत क्षेत्र के तीर्थंकरों का और वायव्य दिशा में स्थित रक्तकम्बला शिला पर पूर्व विदेह के तीर्थंकरों का अभिषेक होता है। इसी प्रकार अन्य क्षेत्र के मेरु पर्वत के विषय में जानना चाहिए।

उन शिलाओं पर एक-एक सिंहासन और दो-दो भद्रासन होते हैं। जिनमें से सिंहासन पर बाल तीर्थंकर को विराजमान करके दोनों भद्रासनों पर सौधर्म इन्द्र-इन्द्राणी व ईशान इन्द्र-इन्द्राणी बैठकर 1008 कलशों में भरे क्षीरसागर के फल से बाल तीर्थंकर का जन्माभिषेक करते हैं। वह क्षीर सागर का जल भी दूध के समान स्पर्श-रस-गंध-वर्ण वाला होता है। जैनाचार्यों ने 1008 कलश 8 योजन (96 किमी.) गहरे, चार योजन (48 किमी.) चौड़े व मुख 1 योजन (12 किमी.) का बताया है। ऐसे बड़े-बड़े 1008 कलशों से श्री बाल तीर्थंकर भगवान का जन्माभिषेक होता है। इसी प्रकार अन्य चार मेरु पर्वतों व धातकी खण्ड द्वीप व पुष्करार्ध द्वीप के विषय में जानना चाहिए। पाँचों मेरु का सुन्दर-सा वर्णन 'श्री तिलोयपण्णत्ति', 'श्री त्रिलोक सार', 'श्री हरिवंश पुराण' आदि ग्रन्थों में विस्तार से मिलता है।

पंचमेरु को लक्ष्य करके ही पंचमेरु पुष्पाञ्जलि व्रत किया जाता है। इस व्रत के प्रभाव से एक ब्राह्मण पुत्री ने क्रम से देवपद, मनुष्य होकर चक्रवर्ती पद व आगे उसी भव से सिद्धपद प्राप्त किया।

प्रत्येक वर्ष में तीन बार आने वाले दशलक्षण पर्व की पंचमी से नवमी तक यह व्रत किया जाता है। व्रत में शक्ति अनुसार उपवास या एकाशन करके पंचमेरु का विधान किया जाता है।

दोहा– जम्बुद्वीप से आठवाँ नन्दीश्वर हितकार।
उसके सब जिनबिम्ब को वन्दन बारम्बार॥

संघ में 'श्री तिलोय पण्णत्ति ग्रन्थराज'' का स्वाध्याय चल रहा है उसमें मध्यलोक के आठवें नन्दीश्वर द्वीप का विस्तृत वर्णन पढ़ा। पढ़कर मन में अत्यानंद हुआ। उस समय ही **गणिनी आर्यिका आस्थाश्री माताजी** ने उनके द्वारा सृजित नंदीश्वर विधान की नवीन रचना अवलोकनार्थ दी। उसमें तिलोय पण्णत्ति को आधार लेकर माताजी ने 'नन्दीश्वर विधान' में नंदीश्वर द्वीप का, वहाँ–वहाँ के वैभव और पूजा विधि का बहुत सुन्दर वर्णन किया है। नंदीश्वर व्रत कथा से इस व्रत विधान की महिमा ज्ञात होती है। व्रत कथा के अनुसार कुबेर दत्त वैश्य और सुन्दरी सेठानी के पुत्र श्रीवर्मा ने नन्दीश्वर व्रत का विधिवत पालन किया। जिसके प्रभाव से वे स्वर्गादिक सुख भोगकर आगे हरिषेण चक्रवर्ती बने तथा उसी भव में पुनः व्रतकर आगे मुनि बने वा मोक्ष गये। व्रत के प्रभाव से अनंत वीर्य आगे चक्रवर्ती बना। जयकुमार सेनापति भगवान वृषभदेव के 72वें गणधर बने। इस व्रत की महिमा से कोटिभट् श्रीपाल का कोढ़ मिटा तथा आगे सर्वसुखों के साथ मोक्ष सुख भी प्राप्त हुआ। इत्यादि अनेक उदाहरण प्रथमानुयोग ग्रन्थों में इस व्रत की महिमा बतलाते हैं। प्रस्तुत विधान में 52 अर्घ और 6 पूर्णार्घ हैं।

दोहा– पार्श्वनाथ भगवान हैं, सर्व सुखों की खान।
उनका रविव्रत श्रेष्ठ है, देता सिद्धी निधान॥

भगवान पार्श्वनाथ का पावन जीवन चरित्र समतामूलक है। उनकी दस भव की साधना क्षमा की साधना है। साहस व धैर्य की साधना है। भगवान पार्श्वनाथ ने अपने दस भवों में आये संघर्ष व उपसर्ग पर एकमात्र समता से सफलता प्राप्त की। उनके वैरी कमठ ने जितनी बार उनको दबाया, पीड़ित किया उतना ही भगवान ऊपर उठते गये, सफलता का शिखर प्राप्त करते गये। उन्होंने ईंट का जवाब पत्थर से नहीं दिया बल्कि क्रोध का सामना क्षमा से किया। उन्होंने क्रोध की अग्नि पर क्षमा का जल डाल दिया। भगवान को परेशान करने वाला स्वयं हर बार दुःख के महासागर में गिरता गया। भगवान पार्श्वनाथ का जीवन बताता है अच्छाई का फल अच्छा होता है और कमठ का जीवन बताता है बुराई का फल बुरा होता है। भगवान पार्श्वनाथ ने अपने पवित्र आचरण से बताया जीव का स्वभाव समता है, विषमता नहीं। उनकी समता कष्ट सहिष्णुता को सारे संसार ने सराहा तथा उन्हें अपना आदर्श माना। इसलिए आज भारत सहित सम्पूर्ण देश वा विदेश के सभी जिनालयों में सर्वाधिक भगवान पार्श्वनाथजी की प्रतिमायें विराजमान हैं। श्रावकों ने आचार्यों की प्रेरणा से उनकी प्रतिमा विराजमान की तो अनेक आचार्यों, मुनियों, भट्टारकों व कवियों ने उनके जीवन चरित्र को अनेक पुराण ग्रन्थों, कथा, नाटक, कविता–स्तोत्र व

पूजा में लिपिबद्ध किया। सबने अपनी शैली में भगवान का गुणानुवाद किया। भगवान पार्श्वनाथ के नाम से अनेक व्रत भी किये जाते हैं। उनमें रविव्रत व मुकुट सप्तमी व्रत विशेष हैं। सम्पूर्ण देश में सर्वाधिक प्रचलित व्रत रविव्रत है। रविव्रत भी अहंकारी के अहंकार को तोड़ने वाला और धनहीन को धनवान, दुःखियों को सर्वसुखी बनाने वाला व्रत हैं। इसकी कथा से हम व्रत के सम्पूर्ण रहस्य को जान सकते हैं। रविव्रत पर भी संस्कृत व हिन्दी में अनेक विधान देखने को मिलते हैं। इसी रविव्रत पर हमारी संघस्था आर्यिका आस्थाश्री माताजी ने भी एक सुन्दर सारगर्भित स्वतंत्र रविव्रत विधान बनाया है। रविव्रत के 9 वर्ष के 9 वलयों के अर्घ में माताजी ने अपने ढंग से भगवान पार्श्वनाथ की भक्ति की है। साथ में हम प्रभु भक्ति कितने द्रव्यों से, कितने प्रकार से कर सकते हैं। यह संदेश भी विधान के अनेक छन्दों में दिया है।

इसमें 81 अर्घ व कुछ पूर्णार्घ है इस विधान में उन्होंने, दोहा, काव्य, शम्भु, सखी, नरेन्द्र, चौपाई, गीता आदि अनेक छन्दों का प्रयोग किया है। पूरा विधान सरल, सहज सुन्दर है।

नंदीश्वर विधान और भी अनेक विधानों की रचना की है व महासती चन्दना, सती मनोरमा आदि अनेक कथा साहित्य का भी सृजन किया है। एक साथ **'सोलहकारण, दशलक्षण, पंचमेरु, नंदीश्वर, रविव्रत, मोक्षशास्त्र, णमोकार, एकीभाव, चंदन षष्ठी विधान'** ये आठ विधान संयुक्त रूप में प्रकाशित होने जा रहे हैं। इन विधानों में माताजी ने शंभु, गीता, नरेन्द्र, जोगीरासा, कुसुमलता, चौपाई, अवतार, सखी, काव्य, दोहा, सोरठा, अडिल्ल, रोला, धत्ता, त्रिभंगी आदि अनेक छंदों का सुन्दर ढंग से प्रयोग किया है। मूल में **सोमसेनाचार्य व अभयनंदी आचार्य** ने प्राकृत व संस्कृत भाषा में सोलहकारण व दशलक्षण विधान की रचना की है व हिन्दी में **रईधु कवि** के दोनों विधान है। उन्हीं को आधार बनाकर वर्तमान भाषा शैली में नये ढंग से सरल छन्दों में, सुलझे सरस शब्दों में माताजी ने बहुत ही सुन्दर रचना की है।

विधान लेखन के क्षेत्र में माताजी का रचना धर्म अत्यन्त सराहनीय, प्रशंसनीय है। इसके साथ माताजी ने एकीभाव व णमोकार विधान आदि अनेकों की भी रचना की है, जो प्रकाशित हो गये हैं।

आपकी यह लेखनी अनवरत चलती रहे एवं यही श्रुत साधना, केवलज्ञान की प्राप्ति में कारण बने, यही उनके लिए आशीर्वाद है।

ग्रन्थ के प्रकाशक, मुद्रक व पूजक सभी को शुभाशीर्वाद।

–आचार्य गुप्तिनन्दी

पंचमेरु की विशेषता

दोहा- पाँचों मेरु जगत में, सर्व शैल की शान।
यहाँ न्हवन जिनका हुआ, बनते वो भगवान॥

पंचमेरु पे विराजित सर्व भगवंतों के चरणों में कोटि-कोटि नमन्।

आचार्यों ने पंचमेरु की विशेषता अनेक ग्रंथों में गाई है। तिलोयपण्णत्ति, त्रिलोकसार, हरिवंशपुराण आदि ग्रन्थों में बड़े विस्तार से इसका वर्णन पढ़ने को मिलता है। इनका उल्लेख चारों अनुयोगों में आता है, क्योंकि इनके ऊपर श्री बाल तीर्थंकर का प्रथम जन्माभिषेक होता है। भगवान के अभिषेक के कारण ही इनकी इतनी विशेषता व अतिशय बढ़ जाता है।

भगवान का जन्मोत्सव पहले मेरु पे मनाया जाता है फिर जन्म नगर में। वैसे तो संसार में बहुत सारे पर्वत हैं परन्तु इन पंचमेरु जैसे पर्वत और नहीं हैं। जिनके पंचकल्याणक होते हैं। उनका मेरु पे न्हवन होता है, जो सोलहकारण भावना भाता है उनका मेरु पे 1008 कलशों से महाभिषेक होता है। पंचमगति को प्राप्त करने वाले बाल जिनेश्वर की स्तुति सौधर्म इन्द्र यही मेरु पे करता है।

इस ढ़ाई द्वीप में पाँच मेरु है। उसमें जम्बूद्वीप के बीचोंबीच 'सुमेरु पर्वत' है। इस सुमेरु पर्वत के 'हरिवंश पुराण' में अनेक नाम आये हैं। वज्रमूक, सवैडूर्यचूलिक, मणिचित विचित्राश्चर्यकीर्ण, स्वर्णमध्य, सुरालय, मेरु, सुमेरु, महामेरु, सुदर्शन, मन्दर, शैलराज, वसन्त, प्रियदर्शन, रत्नोच्चय, दिशामादि, लोकनाभि, मनोरम, लोकमध्य, दिशामन्त्य, दिशामुत्तर, सूर्याचरण, सूर्यावर्त, स्वयंप्रभ और सुरगिरि इस प्रकार आचार्यों ने अनेक नामों के द्वारा सुमेरु पर्वत का वर्णन किया है।

जिनसेन आचार्य ने हरिवंश पुराण में पाँचों मेरु का बहुत ही सुन्दर वर्णन किया है। लंबाई चौड़ाई, ध्वजायें, जिनालय आदि वहाँ पर जो कुछ भी है वह सब बड़े विस्तार से बताया है। विशेष जानकारी के लिये हरिवंशपुराण पढ़ें।

सुमेरु पर्वत 1 लाख 40 योजन ऊँचा है, इसकी नींव 10 हजार योजन जमीन में है। 40 योजन की चूलिका होती है। इस पे चार वन हैं। जो एक से बढ़कर एक सुन्दर रमणीय नाना प्रकार के वृक्षों से सुशोभित है। इसके चारों वनों में चार-चार चैत्यालय हैं, इस प्रकार कुल 16 चैत्यालय होते हैं।

पहला वन भद्रसाल है, दूसरा नंदन वन है, तीसरा सौमनस वन है, चौथा पाण्डुक वन है। इसी पाण्डुक वन की चार दिशा को छोड़कर चारों विदिशा में चार शिलायें बनी हुई हैं। इन्हीं पे भगवान त्रिलोकीनाथ तीर्थंकर का जन्माभिषेक होता है। इस सुमेरु पर्वत का रंग मूल में 'वज्रमय' जैसा है, मध्य में 'रत्नमय' और ऊपर 'सुवर्णमय' एवं चूलिका नीलमणि की है।

इसी प्रकार सुमेरु पर्वत के समान ही चारों मेरु हैं। दो मेरु धातकी खण्ड द्वीप में हैं और दो मेरु पुष्करवर द्वीप में हैं। इन चारों मेरु की ऊँचाई सुमेरु पर्वत से कम है। इनमें भी चार वन 16-16 चैत्यालय है। पाँचों मेरु के कुल 80 चैत्यालय हैं। इनके वनों के नाम व जो अकृत्रिम वस्तुयें हैं जैसे वक्षारगिरि, गजदंत पर्वत, विजयार्ध पर्वत, कुलाचल आदि सब समान नाम वाले हैं। वर्ण भी चारों मेरु का सुमेरु पर्वत के समान ही है। इन चारों मेरुओं की शिला पे भी बाल तीर्थंकरों का जन्माभिषेक होता है। चारों मेरु की लम्बाई, चौड़ाई, ऊँचाई एक समान है। सुमेरु पर्वत इन सबसे बड़ा है। ये सभी मेरु व मेरु पे बने सभी चैत्यालय शाश्वत हैं, अनादिनिधन हैं। इनको किसी ने बनाया नहीं, इन्हें कोई मिटा नहीं सकता।

ढाई द्वीप के मेरु आदि चैत्य चैत्यालय अकृत्रिम हैं। हमेशा एक जैसे रहने वाले हैं। इन मेरुओं की जितनी प्रतिमायें हैं। वो सब 8 प्रातिहार्य से युक्त हैं, मंगल द्रव्यों से पूज्य इन प्रतिमाओं पर 64 चँवर दिन-रात ढुरते रहते हैं। 108-108 प्रतिमायें 500 धनुष की यहाँ पर होती है। नाना रत्नों की ये प्रतिमायें भव्यात्माओं का कल्याण करने वाली है। हर जिनालय में 108, 108 ध्वजायें फहराती है। भगवान के आजू-बाजू सर्वाण्ह यक्ष, सनत्कुमार यक्ष चँवर ढुराते हैं। श्रीदेवी और श्रुतदेवी हर जिनालय में हैं। इस प्रकार प्रत्येक जिन प्रतिमा के पास दो यक्ष व दो देवियाँ विराजित हैं। ऐसे सुन्दर-सुन्दर बड़े स्तूप से युक्त शिखरबद्ध मंदिरों की पूजा वंदना करने चतुर्णिकाय के देव सदा जाते रहते हैं। विद्याधर आदि भी इनकी पूजा वंदना करते हैं।

भगवान का अभिषेक देखने ऋद्धिधारी मुनिराज भी मेरु पे जाते हैं, मेरु के चैत्यालयों की वंदना करते हैं। विद्या के बल से कर्मभूमि के मनुष्य भी पंचमेरु की वंदना, भक्ति, पूजा-पाठ करने जाते हैं। कोई-कोई देव या विद्याधर भी मनुष्य को मेरु पे ले जाते हैं। जैनाचार्यों ने जैनव्रत कथा में पंचमेरु की महिमा

को बताने वाला पुष्पाञ्जलि व्रत बताया है।

एक वर्ष में पंचमेरु की पूजा तीन बार की जाती है, यह 'पुष्पांजलि' व्रत के नाम से जाना जाता है। एक वर्ष में दशलक्षण पर्व तीन बार आता है, उसके साथ ही यह पुष्पांजलि व्रत भी तीन बार आता है। इसके उत्तम रूप में (5) निर्जल उपवास किये जाते हैं, 5 वर्ष तक यह व्रत होता है। एकाशन जघन्य रूप में है। अपनी सामर्थ्य शक्ति को देखते हुये भक्त श्रद्धा भक्ति से इस पंचमेरु के व्रत आदि करके परम्परा से मोक्ष को प्राप्त करते हैं।

विशेषकर यह व्रत भाद्रपद शुक्ला पंचमी से नवमी तक किया जाता है, सब भक्त भादो महीने में व्रत उपवास अधिक करते हैं। भाद्रपद, माघ, चैत्र इस प्रकार एक वर्ष में यह व्रत तीन बार किया जाता है। इस व्रत को समझे जाने व भक्ति के साथ पालन करें।

श्री पंचमेरु विधान का मांडला

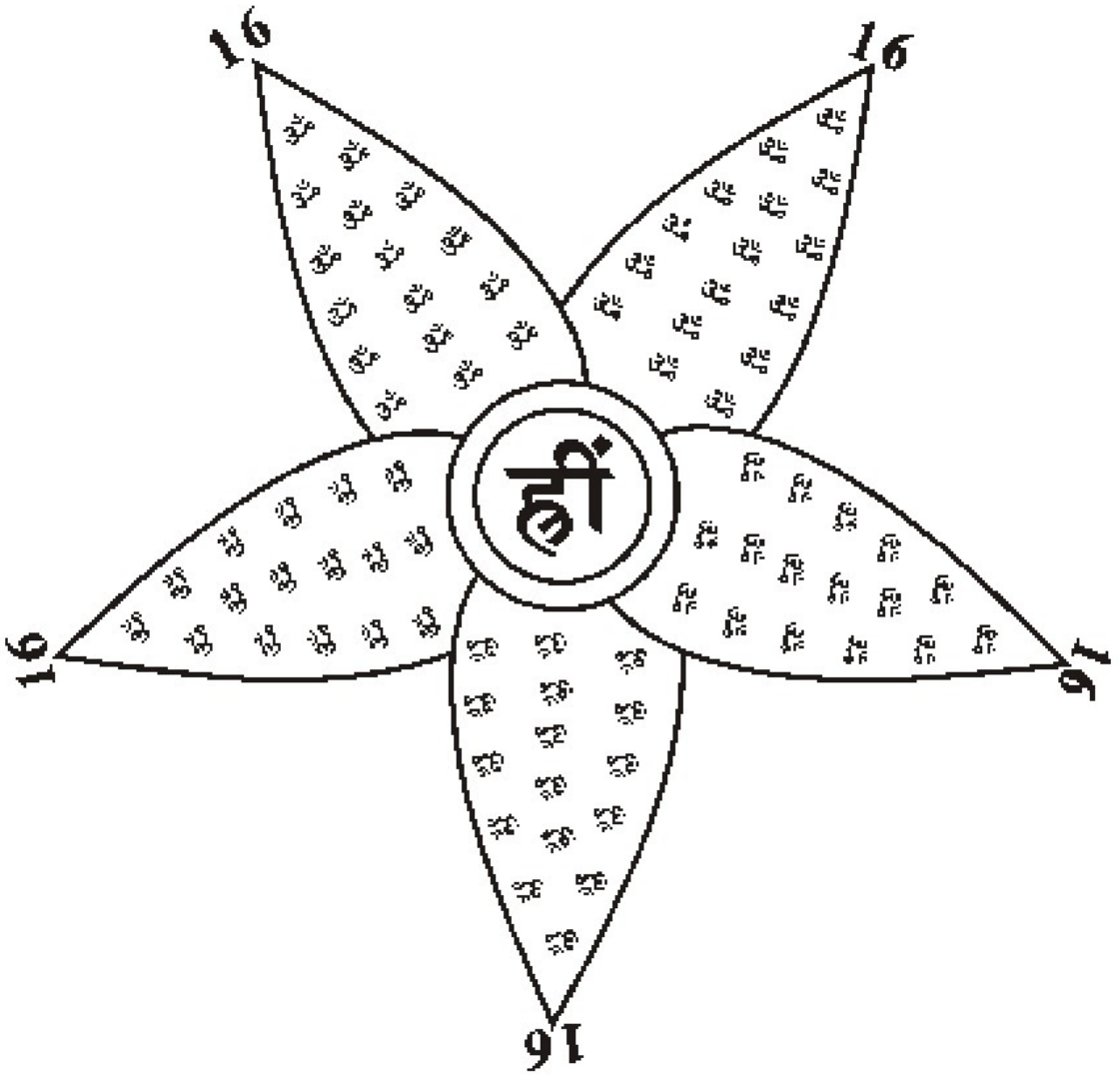

पाँचों मेरु के **16-16** अर्घ और **2-2** पूर्णार्घ चढ़ते हैं।

पूजन की थाली में निम्नलिखित श्लोक बोलते हुए स्वस्तिक बनायें व अंक लिखें–

श्लोक– **रयणत्तयं च वंदे चउवीस जिणे च सव्वदा वंदे।**
पञ्च गुरुणां वंदे चारण–चरणं च सव्वदा वंदे।।

3

2 卐 24

5

विनय पाठ

(दोहा)

प्रथम जिनेश्वर देव हो, वीतराग सर्वज्ञ।
हित उपदेशी नाथ तुम, ज्ञानरवि मर्मज्ञ।।1।।

केवलज्ञानी बन प्रभो, हरा जगत् अंधियार।
तीन लोक के बंधु बन, किया जगत् उपकार।।2।।

धर्म देशना से मिला, जग को दिव्य प्रकाश।
तव चरणों में नित रहे, यही करें अरदास।।3।।

कर्म बेड़ियाँ तोड़ने, भक्ति करें त्रयकाल।
तीन योग से हे प्रभो !, चरणों में नत भाल।।4।।

चतुर्गति भव भ्रमण से, तारों हमें जिनेश।
दयानिधि जिन ! कर दया, हरलो पाप विशेष।।5।।

प्रभुवर पूजा आपकी, सर्व रोग विनशाय।
विष भी अमृत हो प्रभो !, शत्रु मित्र बन जाय।।6।।

हलधर बलधर चक्रधर, अर्चा के उपहार।
परम्परा जिनभक्ति से, दे प्रभु पद उपहार॥7॥

बड़े पुण्य से जिन मिले, मिला प्रभु का द्वार।
मुक्त करो त्रय रोग से, विनती बारम्बार॥8॥

हम सेवक प्रभु आपके, हे अबोध ! अनजान।
राग-द्वेष अज्ञान हर, दे दो सच्चा ज्ञान॥9॥

मंगल उत्तम शरण है, मंगलमय जिनधर्म।
मंगलकारी सब गुरु, हरो हमारे कर्म॥10॥

चौबीसों जिनवर नमूँ, नमन पंच परमेश।
जिनवाणी गणधर गुरु, 'आस्था' नमें हमेश॥11॥

दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

पूजा आरंभ (हिन्दी)

ॐ जय-जय-जय - नमोस्तु-नमोस्तु-नमोस्तु।
णमो अरिहन्ताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं॥

(ॐ ह्रीं अनादिमूलमंत्रेभ्यो नमः परिपुष्पाञ्जलि क्षिपामि)

चत्तारि मंगलं, अरिहन्ता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा। चत्तारि सरणं पवज्जामि, अरिहंते सरणं पवज्जामि, सिद्धे सरणं पवज्जामि, साहू सरणं पवज्जामि, केवलिपण्णत्तो धम्मो सरणं पवज्जामि।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा, पुरिपुष्पाञ्जलि क्षिपामि।

णमोकार मंत्र महिमा

(चौपाई)

अपवित्र या जन पवित्र हो, सुस्थित हो या दुस्थित भी हो।
नमस्कार मंत्रों को ध्यायें, पापों से छुटकारा पायें।।1।।

सर्व अवस्था में भी ध्यायें, पापी भी पावन बन जाये।
जो सुमिरे नित परमातम को, अन्दर बाहर शुचि बने वो।।2।।

अपराजित ये मंत्र कहाता, सब विघ्नों को दूर भगाता।
सब मंगल में मंगलकारी, प्रथम सुमंगल जग उपकारी।।3।।

महामंत्र णवकार हमारा, सब पापों से दे छुटकारा।
सब मंगल में प्रथम कहाता, महामंत्र मंगल कहलाता।।4।।

परम ब्रह्म परमेष्ठी वाचक, सिद्धचक्र सुन्दर बीजाक्षर।
मैं मन-वच-काया से नमता, नमस्कार मंत्रों को करता।।5।।

अष्टकर्म से मुक्त जिनेश्वर, श्रीपति जिन मंदिर परमेश्वर।
सम्यक्त्वादि गुणों के स्वामी, नमस्कार मैं करता स्वामी।।6।।

जिनवर की संस्तुति करने से, मुक्ति मिले सारे विघ्नों से।
भूतादि का भय मिट जाता, विष निर्विष निश्चित हो जाता।।7।।

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरूसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे कल्याणमहंयजे।।1।।

ॐ ह्रीं श्री भगवतो गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाण पंचकल्याणकेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरूसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनइष्टमहंयजे।।2।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हंत्सिद्ध आचार्य उपाध्याय सर्वसाधुभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरूसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाममहंयजे॥3॥

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनसहस्रनामेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वस्ति मंगल विधान

(शंभु छंद)

श्री मज्जिनेन्द्र हो विश्ववंद्य, तुम तीन जगत के ईश्वर हो।
तुम चऊ अनंत गुण के धारी, स्याद्वाद धर्म परमेश्वर हो॥
श्री मूल संघ की विधि से मैं, अपना बहु पुण्य बढ़ाने को।
मैं मंगल पुष्प चढ़ाता हूँ, जिन पूजा यज्ञ रचाने को॥1॥

त्रैलोक्य गुरु हे जिनपुंगव !, मैं तुमको पुष्प चढ़ाता हूँ।
अपने स्वभाव में सुस्थित जिन, मैं तुमको पुष्प चढ़ाता हूँ॥
सम्पूर्ण रत्नत्रय के धारी, मैं तुमको पुष्प चढ़ाता हूँ।
हे समवशरण वैभव धारी, मैं तुमको पुष्प चढ़ाता हूँ॥2॥

अविराम प्रवाहित ज्ञानामृत, सागर को पुष्प समर्पित है।
निज परभावों के भेद विज्ञ, जिनवर को पुष्प समर्पित है॥
त्रिभुवन को सारे द्रव्यों के, नायक को पुष्प समर्पित है।
त्रैकालिक सर्व पदार्थों के, ज्ञायक को पुष्प समर्पित है॥3॥

पूजा के सारे द्रव्यों को, श्रुत सम्मत शुद्ध बनाया है।
यह भाव शुद्धि के अवलम्बन, द्रव्यों को शुद्ध सजाया है॥
शुचि परमातम का अवलम्बन, आतम को शुद्ध बनाता है।
उसको पाने हे जिन ! तेरी, यह पूजा भव्य रचाता है॥4॥

अर्हत् पुराण पुरुषोत्तम जिन, उनमें न सचमुच गुरुता है।
मैं भी स्वभाव से उन सम हूँ, मुझमें न निश्चय लघुता है॥

प्रभु से हो एकाकार मेरा, मैं ऐसी भक्ति रचाता हूँ।
केवल ज्ञानाग्नि में अपना, मैं पुण्य समग्र चढ़ाता हूँ॥5॥

ॐ ह्रीं जिनप्रतिमोऽपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

स्वस्ति मंगल पाठ

(चौपाई)

वृषभ सुमंगल करे हमारा, अजित सुमंगल करे हमारा।
संभव स्वामी मंगलकारी, अभिनंदन हैं मंगलकारी॥1॥

सुमतिनाथ हैं मंगलकारी, पद्मप्रभु हैं मंगलकारी।
श्री सुपार्श्व जिन मंगलकारी, चंद्रप्रभु हैं मंगलकारी॥2॥

पुष्पदंत हैं मंगलकारी, शीतल स्वामी मंगलकारी।
श्री श्रेयांस जिन मंगलकारी, वासुपूज्य हैं मंगलकारी॥3॥

विमलनाथ हैं मंगलकारी, श्री अनंत जिन मंगलकारी।
धर्मनाथ हैं मंगलकारी, शांतिनाथ हैं मंगलकारी॥4॥

कुंथुनाथ हैं मंगलकारी, अरहनाथ हैं मंगलकारी।
मल्लिनाथ हैं मंगलकारी, मुनिसुव्रत हैं मंगलकारी॥5॥

नमि जिनवर हैं मंगलकारी, नेमीनाथ हैं मंगलकारी।
पार्श्वनाथ हैं मंगलकारी, वीर जिनेश्वर मंगलकारी॥6॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

स्वस्ति मंगल विधान

(यहाँ प्रत्येक श्लोक के अंत में पुष्पाञ्जलि क्षेपण करना चाहिए।)

नित्य अचल क्षायिक ज्ञानधारी, विशुद्ध मनःपर्यय ज्ञानधारी।
देशावधि आदि युत ऋषि मुनिगण, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥1॥

महाकोष्ठ बीजबुद्धि पदानुसारि, संभिन्न संश्रोतृ स्वयं बुद्धिधारी।
प्रत्येकबुद्ध-बोधिबुद्ध ऋषिवर, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में।।2।।

अभिन्नदशपूर्व-चतुर्दश पूर्वी, दिव्य मतिज्ञान महाबलधारी।
अष्टांगनिमित्त ज्ञाता ऋषिगण, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में।।3।।

स्पर्श-चक्षु-कर्ण-घ्राण-रसना, आदि प्रबल इन्द्रिय के धारी।
महाशक्तिवन्त जिनमुनि-यति-ऋषिगण, स्वस्ति सदा हो उन चरणोंमें।।4।।

फल-तन्तु-नीर-जंघा-श्रेणी, पुष्प-बीज-अंकुर-रवि-अग्नि-गामी।
नभ-जल-वायुचारण ऋषिगण, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में।।5।।

अणु-महालघु-गुरुऋद्धिधारी, सकामरूपित्व-वशित्वधारी।
वर्द्धमान बल के धारी गुरुवर, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में।।6।।

मन औ वचनबल-कायबल ऋद्धि, प्राकाम्य-अप्रतिघात गुणधारी।
विक्रिया-क्रियाऋद्धि धारी गुरुवर, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में।।7।।

उग्रोग्रतप-दीप्त-तप-तप्ततपसी, अवस्थित-उग्रतप-महातपऋद्धि।
तपो-लब्धि आदि से युक्त ऋषिगण, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में।।8।।

आमर्ष-सर्वौषध ऋद्धिधारी, आषीर्विष-दृष्टिविष बल धारी।
सखिल्ल-विडजल्ल-मल्लौषधियुक्त, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में।।9।।

क्षीरास्रवी-घृतस्रावी मुनीश्वर, अमृत-मधु-महारस के धारी।
अक्षीणआलय-महानस आदि, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में।।10।।

इति परमर्षि स्वस्ति मंगल विधानं

(9 बार णमोकार मंत्र का जाप करें)

श्री नित्यमह पूजा

रचियित्री : ग. आर्यिका राजश्री माताजी

शंभु छन्द *(तर्ज– हे वीर तुम्हारे...)*

अरिहंत, सिद्ध, सूरी, पाठक, साधु और जिनवर चौबीसों।
गणधर जिन पंच बालयतिवर, जिन आगम गुरु प्रभुवर बीसों।।
माँ जिनवाणी, निर्वाणभूमि, रत्नत्रय, दशलक्षण प्यारा।
नंदीश्वर पंचमेरू जिनवर, जिनचैत्य चैत्यालय मनहारा।।
जिनधर्म जिनागम बाहुबली, सोलहकारण पूजन करता।
इनका आह्वानन करके मैं, श्री मोक्ष महल का सुख वरता।।1।।

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्र ! अत्र अवतर–अवतर संवौषट् आह्वानम्।
ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठ: ठ: स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणम्।

नरेन्द्र छन्द *(तर्ज : माइन–माइन...)*

धीर वीर गंभीर प्रभु की अर्चा मैं नित करता हूँ।
निर्मल जल की त्रय धारा दे जन्म–जरा–मृत हरता हूँ।।
देव–शास्त्र–गुरु बीस तीर्थंकर जिनवाणी गणधर पूजा।
त्रय चौबीसी रत्नत्रय नंदीश्वर दशलक्षण पूजा।।
सोलहकारण बाहुबली निर्वाणभूमि वा नवदेवा।
पंच परम परमेष्ठी पद की करते उत्तम सेवा।।1।।

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल चंदन चरण चढ़ाता शीतलता मुझको देना।
भव का बन्धन हरने वाले भव की ज्वाला हर लेना।। देव शास्त्र..।।2।।

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

धवल मनोहर अक्षत लाया अक्षयपद पाने हेतू।
अक्षयपद को देने वाली पूजन है सबका सेतू ।। देव शास्त्र..।।3।।

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जल भूमिज बहु पुष्प चढ़ाऊँ श्रद्धा से जिन गुण गाऊँ।
कामबाण को वश में करके मन ही मन मैं हर्षाऊँ ।।
देव-शास्त्र-गुरु बीस तीर्थंकर जिनवाणी गणधर पूजा।
त्रय चौबीसी रत्नत्रय नंदीश्वर दशलक्षण पूजा।।
सोलहकारण बाहुबली निर्वाणभूमि वा नवदेवा।
पंच परम परमेष्ठी पद की करते उत्तम सेवा।।4।।

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पुआ पकौडी रबड़ी घेवर आदिक व्यंजन मैं लाया।
क्षुधावेदनी के भेदन को प्रभु सन्मुख दौड़ा आया।। देव शास्त्र..।।5।।

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जगमग दीपों की थाली ले आरती प्रभु की गाऊँगा।
मोहकर्म का नाश मेरा हो सम्यक्भाव बनाऊँगा।। देव शास्त्र..।।6।।

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप धूपायन में खेकर मैं अष्टकर्म का हनन करूँ।
प्रभु प्रतिमा के दर्शन करके निज स्वभाव का वरण करूँ।। देव शास्त्र..।।7।।

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे मीठे फल से अर्चा मनवांछित फल देती है।
प्रभु की अर्चा मेरे जीवन के संकट हर लेती है।। देव शास्त्र..।।8।।

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीरादिक आठों द्रव्यों का सुन्दर थाल सजाया है।
पद अनर्घ्य की अभिलाषा से भक्तिभाव जगाया है।। देव शास्त्र..।।9।।

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा : वीतराग भगवान की, पूजा सब सुख खान।
त्रयधारा जल की करूँ, छोड़ूँ सब अभिमान।।

शांतये शांतिधारा।

दोहा– काम सृष्टि का नाश हो, पुष्पवृष्टि के साथ।
पुष्पांजलि क्षेपण करूँ, पूर्ण विनय के साथ।।

दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

जाप्य मंत्र : ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो नमः स्वाहा। (9, 27 या 108 बार जाप करें)

जयमाला

दोहा : जयमाला की माल से, गूंजे जय–जयकार।
जयमाला हम पढ़ रहे, मिलकर सब नर–नार।।

शंभु छन्द *(तर्ज : ये देश है वीर...)*

श्री वीतराग सर्वज्ञ हितैषी अरिहंतों को नमन करूँ।
श्री सिद्ध सूरी पाठक साधु जिनचैत्य जिनालय नमन करूँ।।
सब द्वीपों के प्रभुवर न्यारे सीमंधर आदिक को ध्याऊँ।
श्री पंचमेरू अरू नंदीश्वर के चैत्यालय के गुण गाऊँ।।1।।

दशलक्षणधर्म हृदय धारूँ सोलहकारण भावन भाऊँ।
रत्नत्रय धारण करने के सम्यक् साधन को अपनाऊँ।।
चौदह सौ बावन गणधर जी सब ऋद्धि–सिद्धि देने वाले।
प्रभु के पाँचों कल्याणक भी सबका संकट हरने वाले।।2।।

जिनवर के सब जन्मस्थल को करता हूँ मैं शत–शत वंदन।
श्रावस्ती कौशाम्बी काशी अयोध्या चंद्रपुरी वंदन।।
काकंदी राजगृही मिथिला चंपापुर कुंडलपुर वंदन।
वैशाली सिंहपुरी कम्पिल हस्तिनापुर आदि वंदन।।3।।

अतिशय औ सिद्धक्षेत्र जी का सुमरण सब पाप तिमिर हरता।
मैं चंपा पावा ऊर्जयंत सम्मेदशिखर वंदन करता।।

पावा द्रोणा सोना तुंगी कैलाश चूलगिरी ध्याऊँगा।
रेसंदी मुक्ता उदयरत्न कुंथलगिरी को मैं जाऊँगा।।4।।

विपुलाचल पोदनपुर मथुरा तारंगा गजपंथा वंदन।
श्री सिद्धवरकूट कमलदहजी गुणावा शत्रुंजय वंदन।।
अहिक्षेत्र अणिंदा णमोकार जटवाडा पैठण चंवलेश्वर।
कचनेर चाँदखेड़ी पाटन जिन्तूर तिजारा गोमटेश्वर।।5।।

कुन्थुगिरी नवग्रह धर्मतीर्थ मांडल केशरिया को वंदन।
श्री महावीरजी पदमपुरा ऋषितीर्थ आदि को भी वंदन।।
जय ऊर्ध्व मध्य और अधोलोक के सब चैत्यालय मनहारी।
निर्वाण सिधारे पूज्य पुरुष की पूजा सब संकटहारी।।6।।

श्री राम हनु सुग्रीव नील महानील कुम्भ शम्बु ज्ञानी।
लवमदनांकुश सागर वरदत्त श्री बाहुबली स्वामी ध्यानी।
गौतम जम्बू सुधर्मा श्री त्रय पांडवसुत अनिरूद्ध नमन।
इस ढाईद्वीप से मोक्ष पधारे उन गुरुओं को है वंदन।।7।।

श्री पँचबालयति को ध्यायें नवदेवों की शरणा पायें।
सातिशय पुण्य कमाने को मंगलमय पूजा हम गायें।।
जिनगुण के अनुरागी बनकर संसार भ्रमण का नाश करें।
शिवपुर के राजतिलक हेतु यह 'राज' प्रभुगुण आश करे।।8।।

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा : श्री जिन के आशीष से, प्रगटाऊँ निज ज्ञान।
पूजन-कीर्तन-भजन से 'राज' वरे शिव थान।।

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

श्री चौबीस तीर्थंकर पूजा

रचनाकार–आचार्य गुप्तिनंदीजी

(गीता छन्द)

वृषभादि से वीरान्त तक है सर्व जिन की अर्चना।
हरती हमारे पाप तम और क्लेश की सब वंचना।।
त्रय रत्न गुणधर तीर्थकर की पुष्प लेकर थापना।
प्रभु का परम सान्निध्य पा हम दुःख मिटाये आपना।।1।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर समूह अत्र अवतर–अवतर संवौषट् आह्वानम्।
ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर समूह अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः–ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर समूह अत्र मम सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणं।

(अडिल्ल छन्द)

निर्मल जल हम कंचन झारी में भरें।
जिनवर के चरणों में त्रय धारा करें।।
जिन शासन का चक्र प्रवर्तन कर रहे।
चौबीसों जिनवर भव संकट हर रहे।।1।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कुन्दन सम शीतल चन्दन अर्पण करें।
जिनवर की अर्चा भव का वर्तन हरे।। जिन शासन...।।2।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनम् निर्वपामीति स्वाहा।

मुक्ता और अक्षत मुष्ठि में भर लिये।
अक्षय सुखदाता को अर्पण कर दिये।। जिन शासन...।।3।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

अम्बुज भूमिज मनहर सुरभित सुमन से।
मदनजयी को पूजे निज मन्मथ नशे।। जिन शासन...।।4।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सरस मधुर प्रासुक व्यञ्जन से अर्चना।
परम कृपालु हरें क्षुधा की वंचना।।
जिन शासन का चक्र प्रवर्तन कर रहे।
चौबीसों जिनवर भव संकट हर रहे।।5।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत कपूर दीपों से करते आरती।
जिनवर वाणी केवल दीप उजालती।। जिन शासन...।।6।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

हितकर मनहर धूप चढ़ायें नाथ को।
कर्म विनाशन हेतु झुकायें माथ को।। जिन शासन...।।7।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपम् निर्वपामीति स्वाहा।

सरस मधुर केला आदि फल ला रहे।
मुक्ति फल दाता के चरण चढ़ा रहे।। जिन शासन...।।8।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल-फल आदि अर्घ बनाये भाव से।
अनर्घ पद हित भक्ति रचायें चाव से।। जिन शासन...।।9।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- प्रभु को लख प्रमुदित हुआ, मन में हर्ष अपार।
तन मन को शांति मिले, करता शांतिधार।।

शांतये शांतिधारा...

प्रभु चरणों के पास में, अर्पित करते हार।
संयम के सौरभ खिले, पायें शिवपुर द्वार।।

दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्....

जाप्य मन्त्र-ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः।

(9, 27 या 108 बार जाप करें)

जयमाला

दोहा – आदिनाथ से वीर तक चौबीसों भगवान।
उनकी जयमाला पढ़ें होवें सिद्ध समान।।

चौपाई

वृषभ धर्म वृषभेश बतायें, अजित कर्म अरि पर जय पायें।
संभव भव का भ्रमण छुड़ायें, अभिनंदन सुरवंद्य कहाये।।1।।

सुमति जिनेश सुमति के दाता, चित्त पद्म के पद्म विधाता।
श्री सुपार्श्व भव पाश हरेंगे, 'चन्द्र' चित्त में वास करेंगे।।2।।

पुष्पदंत को पुष्प चढ़ायें, शीतल अंतस्तल बस जायें।
श्री श्रेयांस श्रेय के दाता, वासुपूज्य वसु कर्म विघाता।।3।।

विमल कर्म मल दूर भगायें, जिन अनंत शक्ति प्रगटायें।
धर्मनाथ दशधर्म सिखायें, शांति जगत में शांती लायें।।4।।

कुंथु से कुंथ्वादिक रक्षा, अरहनाथ की श्रेष्ठ विवक्षा।
मल्लि कर्म मल्लों को जीते, मुनि सुव्रत व्रत अमृत पीते।।5।।

नमि को नमे सकल नर नारी, नेमि तजे राजुल सुकुमारी।
पारस के हम पार्श्व रहेंगे, वर्द्धमान को नमन करेंगे।।6।।

चौबीसों तीर्थेश हमारे, पंचकल्याणक जिनके न्यारे।
'गुप्तिनंदी' प्रभु के गुण गाये, तीन गुप्ति धर शिव सुख पाये।।7।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादि वीरांत चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

चौबीसों जिनदेव को, वंदन बारम्बार।
उनकी पूजा भक्ति से, मिले मोक्ष प्राकार।।

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

ऋद्धि मंत्र

स्वाहा बोलते हुये प्रत्येक मंत्र में यहाँ पुष्प चढ़ायें या धूप चढ़ायें। विधान करने से पूर्व ऋद्धि मंत्र अवश्य पढ़े।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं।।1।।

1. णमो जिणाणं
2. णमो ओहि-जिणाणं
3. णमो परमोहि-जिणाणं
4. णमो सव्वोहि-जिणाणं
5. णमो अणंतोहि-जिणाणं
6. णमो कोट्ठ-बुद्धीणं
7. णमो बीज-बुद्धीणं
8. णमो पादाणु-सारीणं
9. णमो संभिण्ण-सोदारणं
10. णमो सयं-बुद्धाणं
11. णमो पत्तेय-बुद्धाणं
12. णमो बोहिय-बुद्धाणं
13. णमो उजु-मदीणं
14. णमो विउल-मदीणं
15. णमो दस पुव्वीणं
16. णमो चउदस-पुव्वीणं
17. णमो अट्ठंग-महा-णिमित्त-कुसलाणं
18. णमो विउव्वइड्ढि-पत्ताणं
19. णमो विज्जाहराणं
20. णमो चारणाणं
21. णमो पण्ण-समणाणं
22. णमो आगासगामीणं
23. णमो आसी-विसाणं
24. णमो दिट्ठिविसाणं
25. णमो उग्ग-तवाणं
26. णमो दित्त-तवाणं
27. णमो तत्त-तवाणं
28. णमो महा-तवाणं
29. णमो घोर-तवाणं
30. णमो घोर-गुणाणं
31. णमो घोर-परक्कमाणं
32. णमो घोर-गुण-बंभयारीणं
33. णमो आमोसहि-पत्ताणं
34. णमो खेल्लोसहि-पत्ताणं
35. णमो जल्लोसहि-पत्ताणं
36. णमो विप्पोसहि-पत्ताणं
37. णमो सव्वोसहि-पत्ताणं
38. णमो मण-बलीणं
39. णमो वचि-बलीणं
40. णमो काय-बलीणं
41. णमो खीर-सवीणं
42. णमो सप्पि-सवीणं
43. णमो महुर सवीणं
44. णमो अमिय-सवीणं
45. णमो अक्खीण महाणसाणं
46. णमो वड्ढमाणाणं
47. णमो सिद्धायदणाणं
48. णमो सव्व साहूणं

(णमो भयवदो-महदि-महावीर-वड्ढमाण-बुद्ध-रिसीणो चेदि।)

इति पुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

श्री पंचमेरु समुच्चय विधान पूजा

(नरेन्द्र छंद)

पाँचों मेरु मंगलकारी, अतिशयवान कहाते हैं।
बिम्ब अकृत्रिम श्री जिनवर के, सबका भाग्य जगाते हैं।।
प्रथम न्हवन होता मेरु पे, बाल प्रभु जग स्वामी का।
करते हम आह्वान प्रभु का, सर्व श्रेष्ठ जिन स्वामी का।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु सम्बन्धि अशीति (अस्सी) जिनालयस्थ जिनबिम्ब समूह ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानम्। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठ:-ठ: स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(नरेन्द्र छंद)

गंगादिक नदियों का जल हम, स्वर्ण कलश में भर लाये।
जन्मादिक त्रय रोग नशाने, हम प्रभु को भजने आये।।
पंचमेरु के सर्व जिनालय, सबका मन हरने वाले।
अस्सी जिन चैत्यालय भज हम, उनसे सच्चा सुख पालें।।1।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्य: जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल दिव्य सुगंधित चंदन, भव आताप मिटाता है।
जो जिन पद में गंध लगाये, वो सुन्दर तन पाता है।। पंचमेरु..।।2।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्य: चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

दिव्य धवल मोती अक्षत के, भर-भर थाल सजाते हैं।
अक्षय पद के दानी प्रभु को, अक्षत पुंज चढ़ाते हैं।। पंचमेरु..।।3।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्य: अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम भाव द्रव्य उत्तम ले, जिन की भक्ति रचाते हैं।
नाना रंगों के सुमनों की, पुष्पाञ्जलि बिखराते हैं।।
पंचमेरु के सर्व जिनालय, सबका मन हरने वाले।
अस्सी जिन चैत्यालय भज हम, उनसे सच्चा सुख पालें।।4।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षुधारोग ये दुःख पहुँचाये, चारों गति में भटकाये।
क्षुधा रोग वश करने जिन हम, व्यंजन शुद्ध बना लाये।। पंचमेरु..।।5।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लाख-लाख दीपक ले भगवन्, भव्य आरती गायें हम।
आरती से आरत मिट जाये, मोह-तिमिर विनशायें हम।। पंचमेरु..।।6।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्निपात्र में धूप चढ़ाकर, दशों दिशायें महकायें।
कर्मवर्गणा ढीली करने, प्रभुवर की पूजन गायें।। पंचमेरु..।।7।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम पद है मोक्ष महापद, वह पद हमको मिल जाये।
आमादिक बहुविध फल लेकर, करुणानिधि को हम ध्यायें।। पंचमेरु..।।8।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीर गंध अक्षत पुष्पादिक्, वसुविधि द्रव्य सजा लाये।
जिन गुण संपत् पाने भगवन्, अर्घ चढ़ाने हम आयें।। पंचमेरु..।।9।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पाँचों मेरु पूजा के पूर्णार्घ

(नरेन्द्र छंद)

मेरु के इन चार वनों में, सोलह चैत्यालय प्यारे।
सुर किन्नरियाँ भक्ति करती, आकर जिनवर के द्वारे।।
पाण्डुक वन की चार शिला पे, बाल प्रभु का न्हवन करें।
सब जिनवर को अर्घ चढ़ायें, द्रव्य भाव युत नमन करें।।1।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(नरेन्द्र छंद)

विजय मेरु के जिन भवनों में, सोलह जिन प्रतिमायें।
सब जिनवर की पूजा करने, परिजन संग सुर आयें।।
चार वनों में सर्व श्रेष्ठ वन, पाण्डुक वन कहलाता।
सुरपति बाल प्रभु को लाकर, इस वन में नहलाता।।2।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(शेर छंद)

श्री बाल प्रभु के चरण इस मेरु पे पड़े।
अभिषेक करने नाथ का सुर देवगण खड़ें।।
षोडश प्रभु के मंदिरों में घंटिया बजें।
लेकर के अष्ट द्रव्य भक्त नाथ को भजें।।3।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल छंद)

मंदर मेरु के जिनवर को पूजते।
प्रभु पूजा से भव के बंधन छूटते।।
इस मेरु पे सोलह चैत्यालय कहे।
आठों मंगल द्रव्यों से शोभित रहे।।4।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपाई)

मेरु सुंदर विद्युन्माली, पूजा की हम लायें थाली।
चारों वन की चार दिशायें, चारों में हैं जिन प्रतिमायें।।
भद्र सोमनस नंदन प्यारा, पाण्डुक वन है उनमें न्यारा।
इन्द्रादिक् जिनवर को लाते, भक्ति भाव से न्हवन कराते।।5।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– **पंचमेरु की अर्चना, करते सुरपति देव।**
सर्व सुखालय जिनभवन, शांति करें सदैव।।

शांतये शांतिधारा

दोहा– **देव–देवियाँ मेरु पे, लाते पुष्प अपार।**
पुष्पाञ्जलि अर्पण करें, सुरगिरि जिनवर द्वार।।

दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

जाप्य मंत्र–ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो नमः स्वाहा। (9, 27 या 108 बार जाप करें।)

जयमाला

दोहा– **पंचमेरु पुष्पाञ्जलि, सुखमय व्रत की खान।**
पाँचों पापों को हरें, पंचमेरु भगवान।।

(शंभु छंद)

श्री पंचमेरु की जयमाला, जयमाला को देने वाली।
श्री मेरु सुदर्शन विजय अचल, मेरु मंदर विद्युन्माली।।
इन पंचमेरु का दर्शन ही, भव्यों को सुख–शांति देता।
जो इसका व्रत पालन करता, वो मोक्ष महा सुख पा लेता।।1।।

इस जम्बूद्वीप का भरत क्षेत्र, उसमें मृणाल नगरी सुन्दर।
उस नगरी में द्विज कन्या ने, स्वीकारा जैन धरम सुखकर॥
उस प्रभावती में धर्म प्रभा, मानों सूरज सम चमक रही।
वह प्रभावती विद्या बल से, कैलासगिरि पर आन रही॥2॥

तत्क्षण देवी पद्मावती माँ, दर्शन हित आई मंदिर में।
प्रभु की पूजा भक्ति करने, सुरगण आये जिनमंदिर में॥
देवी से पंचमेरु व्रत सुन, व्रत ग्रहण किया उस कन्या ने।
विधिपूर्वक व्रत को पालन कर, सुर पद पाया उस कन्या ने॥3॥

वह देव वहाँ से च्युत होकर, नृप रत्नशिखर बन जाता है।
पुष्पाञ्जलि व्रत की महिमा से, वह चक्री पद को पाता है॥
षट्खंडजयी नृप शेखर ने, कई कोटि पूर्व तक राज्य किया।
फिर जग सुख तज मुनिव्रत को वर, श्री सिद्धरूप को प्राप्त किया॥4॥

पुष्पाञ्जलि व्रत के करने से, त्रैकालिक सुख मिल जाता है।
जो पाँच वर्ष तक व्रत पाले, वो पंचम गति को पाता है॥
हम भी इस पुष्पाञ्जलि व्रत में, अति उत्तम द्रव्य चढ़ायेंगे।
'आस्था' से व्रत का पालन कर, गुप्तिधर शिव सुख पायेंगे॥5॥

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु संबंधि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छंद)

श्री पंचमेरु श्रेष्ठ व्रत, जो भव्य श्रद्धा से करे।
वो ही श्रमण जिनराज बन, शिव सौख्य में झूला करें॥
'आस्था' धरें जिनराज पे, हम धर्म अनुरागी बनें।
त्रय गुप्तियों को साध के, हम मोक्ष के भागी बनें॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

श्री सुदर्शन मेरु पूजा

(शंभु छंद)

इस प्रथम सुदर्शन मेरु की, महिमा सारे मुनिगण गायें।
इस मेरु पे ऋषिमंडल है, उसको भक्ति से शिर नायें।।
लख योजन ऊँचे मेरु पे, सोलह चैत्यालय मन भावन।
हम उनकी जिन प्रतिमाओं का, पुष्पों से करते अभिवादन।।

ॐ ह्रीं श्री जम्बूद्वीपस्थ सुदर्शन मेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्ब समूह ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानम्। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठ:-ठ: स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(शंभु छंद)

क्षीरोदधि का निर्मल जल ले, सुरपति मेरु पे भर लाते।
जिन बाल प्रभु का न्हवन करा, झूमे नाचें अति हर्षाते।।
श्री प्रथम सुमेरु पर्वत के, जिनराजों को वंदन करते।
उनके सोलह चैत्यालय की, हम भक्ति सहित पूजन करते।।1।।

ॐ ह्रीं श्री जम्बूद्वीपस्थ सुदर्शन मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्य: जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन लेपन जिनपद में कर, संसार ताप विनशायेंगे।
उस मेरु शिखर के बिम्बों को, हम चंदन खूब चढ़ायेंगे।। श्री प्रथम..।।2।।

ॐ ह्रीं श्री जम्बूद्वीपस्थ सुदर्शन मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्य: चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

दानी में श्रेष्ठ महादानी, श्री जिनवर त्रिभुवन के स्वामी।
हम भी अक्षत से पूज रहे, बनने को त्रिभुवन के स्वामी।। श्री प्रथम..।।3।।

ॐ ह्रीं श्री जम्बूद्वीपस्थ सुदर्शन मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्य: अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पों की छटा निराली है, भौंरे उनपे गुंजार करें।
ऐसे पुष्पों को कर में ले, जिन चरण चढ़ा हम काम हरें।। श्री प्रथम..।।4।।

ॐ ह्रीं श्री जम्बूद्वीपस्थ सुदर्शन मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्य: पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नेवज की भर-भर के थाली, थाली पे थाल चढ़ाते हैं।
मेरुवत द्रव्य चढ़ा प्रभु को, हम क्षुधा रोग विनशाते हैं॥
श्री प्रथम सुमेरु पर्वत के, जिनराजों को वंदन करते।
उनके सोलह चैत्यालय की, हम भक्ति सहित पूजन करते॥5॥

ॐ ह्रीं श्री जम्बूद्वीपस्थ सुदर्शन मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चम-चम करते घृत के दीपक, जो अंधकार विनशाते हैं।
प्रभुवर सम ज्ञान जगाने को, हम मंगल आरती गाते हैं॥ श्री प्रथम..॥6॥

ॐ ह्रीं श्री जम्बूद्वीपस्थ सुदर्शन मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

हम धूप चढ़ाते अग्नि में, प्रभु से अपना नाता जोड़ें।
जिन सम अंतिम तन पाकर हम, निज कर्मों के बंधन तोड़ें॥ श्री प्रथम..॥7॥

ॐ ह्रीं श्री जम्बूद्वीपस्थ सुदर्शन मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

तरबूज पपीता श्रद्धाफल, वा नारंगी जामुन लाये।
रसदार सरस फल ले प्रभु हम, पूजा करने जिनगृह आये॥ श्री प्रथम..॥8॥

ॐ ह्रीं श्री जम्बूद्वीपस्थ सुदर्शन मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

इस मेरु सुदर्शन की कीर्ति, त्रिभुवन में निशदिन गूँज रही।
इसके चऊ्यन की प्रतिमा को, नित भविजन राशि पूज रही॥ श्री प्रथम..॥9॥

ॐ ह्रीं श्री जम्बूद्वीपस्थ सुदर्शन मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुदर्शन मेरु विधान के 16 चैत्यालय के अर्घ

दोहा- पंचमेरु के सर्व जिन, जग में मंगलकार।
उनका यहाँ विधान कर, पायें शांति अपार॥

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

दोहा- भद्रशाल के पूर्व में, चैत्यालय मनहार।
दर्शन कर पूजन करें, होने भवदधि पार।।
षोडश चैत्यालय कहें, मेरु सुदर्शन माय।
सुर मुनि करते वंदना, मेरु शिखर पे जाय।।1।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि भद्रशाल वनस्थित पूर्वदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दक्षिण दिश के नाथ को, मंगल द्रव्य चढ़ाय।
प्रभु पूजा वा जाप कर, समदृष्टि पा जाय।। षोडश..।।2।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि भद्रशाल वनस्थित दक्षिणदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम दिग् वन खंड में, रत्नमयी भगवान।
रत्नत्रय दो जिन हमें, पायें मोक्ष महान्।। षोडश..।।3।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि भद्रशाल वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर के जिनबिम्ब ये, विपुल विशद सुख देय।
जिनवर की आराधना, पाप तिमिर हर लेय।। षोडश..।।4।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि भद्रशाल वनस्थित उत्तरदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदन की पूरब दिशा, नूतन नव सुख लाय।
सूर्यादिक प्रभु को नमें, नित प्रातः सिर नाय।। षोडश..।।5।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि नंदन वनस्थित पूर्वदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दक्षिण दिश जिनबिम्ब को, पूजें मन-वच-काय।
नाथ आपके नाम से, रोग-शोक मिट जाय।। षोडश..।।6।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि नंदन वनस्थित दक्षिणदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदन की पश्चिम दिशा, मंदिर में जिनराज।
देवों द्वारा पूज्य हैं, बजते नित प्रति साज।।
षोडश चैत्यालय कहें, मेरु सुदर्शन माय।
सुर मुनि करते वंदना, मेरु शिखर पे जाय।।7।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि नंदन वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर दिश में शोभते, रत्नमयी जगदीश।
श्री जिन को हम पूजते, सदा झुकायें शीश।। षोडश..।।8।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि नंदन वनस्थित उत्तरदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन भावन वन सोमनस, दिशा पूर्व शुभ नाम।
जिनप्रतिमा जिनचैत्य को, पूजें आठों याम।। षोडश..।।9।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि सौमनस वनस्थित पूर्वदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुखद सौमनस जानिये, दक्षिण दिग् प्रभु होय।
दर्शन पा जिनराज के, तन-मन हर्षित होय।। षोडश..।।10।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि सौमनस वनस्थित दक्षिणदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सौम्य सोमनस लग रहा, प्रभु का रूप सुहाय।
पश्चिम दिश के नाथ को, आठों द्रव्य चढ़ाय।। षोडश..।।11।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि सौमनस वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर दिश जिनबिम्ब को, पूजें हम अविछिन्न[1]।
ऋद्धिधर मुनि आय के, करते कर्म प्रछिन्न[2]।। षोडश..।।12।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि सौमनस वनस्थित उत्तरदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(1) निरन्तर (2) पूरी तरह से नष्ट करना।

पाण्डुक वन की क्या कहे, शोभा कहीं न जाय।
पूर्व दिशा के नाथ को, सुरगण शीश झुकाय।।
षोडश चैत्यालय कहें, मेरु सुदर्शन माय।
सुर मुनि करते वंदना, मेरु शिखर पे जाय।।13।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि पाण्डुक वनस्थित पूर्वदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पाण्डुक वन दक्षिण दिशा, भविजन होय निहाल।
पूजा कर भगवान की, पायें पुण्य विशाल।। षोडश..।।14।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि पाण्डुक वनस्थित दक्षिणदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुरवाई बहती जहाँ, पश्चिम दिश भगवान।
पाण्डुक वन के नाथ को, पूजें भव्य महान्।। षोडश..।।15।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि पाण्डुक वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पाण्डुक वन है स्वर्ण का, स्वर्णाभा दिखलाय।
उत्तर दिश के चैत्य सब, सबका भाग्य जगाय।। षोडश..।।16।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि पाण्डुक वनस्थित उत्तरदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ (नरेन्द्र छंद)

मेरु के इन चार वनों में, सोलह चैत्यालय प्यारे।
सुर किन्नरियाँ भक्ति करती, आकर जिनवर के द्वारे।।
पाण्डुक वन की चार शिला पे, बाल प्रभु का न्हवन करें।
सब जिनवर को अर्घ चढ़ायें, द्रव्य भाव युत नमन करें।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1728 जिनबिम्बों का पूर्णार्घ (नरेन्द्र छंद)

एक-एक मंदिर के अन्दर, इक सौ आठ जिनेश्वर।
सत्रह सौ अट्ठाईस प्रतिमा, इक मेरु के अंदर।।
इन्द्रादि परिकर युत आते, भक्ति नृत्य रचाते।
वीणा ताल मृदंग बजाते, अर्चा कर हर्षाते।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ मध्य विराजित एक सहस्र सप्तशत अष्टाविंशति[1] जिन प्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **एक लाख योजन बड़ा, मेरु सुदर्शन श्रेष्ठ।**
बाल प्रभु का सुरपति, यही करें अभिषेक।।

शांतये शांतिधारा।

दोहा- **पद्म सरोवर में खिले, कमलादिक् बहु फूल।**
पुष्पवृष्टि प्रभु पे करें, काटे कर्मन् शूल।।

दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

जाप्य मंत्र-ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु संबंधि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो नमः स्वाहा। (9, 27 या 108 बार करें)

जयमाला

धत्ता- **जय मेरु सुदर्शन, इसका दर्शन, मन पावन कर देता है।**
ये ऊँचा मेरु, नाम सुमेरु, त्रिभुवन वंदित जेता है।।

(नरेन्द्र छंद)

मेरु सुदर्शन सबको प्यारा, सब मेरु का ये राजा।
इसकी महिमा भविजन गायें, देव-गुरु-नर खग राजा।।
जम्बूद्वीप के मध्य बना है, नाम सुमेरु आता है।
एक लाख चालीस योजन का, मेरु शैल कहाता है।।1।।
इस मेरु पे बने चार वन, चारों में जिन प्रतिमायें।
मन को मोहित करने वाली, पाप ताप सब विनशायें।।

1. 1728 प्रतिमा।

पहला वन श्री भद्रशाल है, दूजा नंदन कहलाता।
और सोमनस कहा तीसरा, पाण्डुक वन चौथा आता।।2।।
मूल सुमेरु वज्रमयी है, मध्य भाग है रत्नों का।
कनकमयी है आभा जिसकी, नीलमणि शुभ रत्नों सा।।
पाण्डुक वन के चउदिश क्रम से, पाण्डुक पाण्डुकम्बला हैं।
चार शिला में तीजी चौथी, रक्ता रक्त कम्बला है।।3।।
पाण्डुक वन में चार शिलायें, चारों शुभ नामों वाली।
होता है अभिषेक इन्हीं पे, सर्व शिला महिमाशाली।।
पाण्डुक शिला दिशा ईशाने, भरत क्षेत्र के जिनवर का।
होता है अभिषेक यहीं पर, प्रथम बाल तीर्थंकर का।।4।।
इस मेरु के नाम अनेकों, आगम में बतलाये हैं।
वज्रमूक मणिचित्र सुरालय, सुरगिरि आदि कहाये हैं।।
लोकनाभि प्रियदर्शन मंदर, लोक मध्य में शोभ रहा।
सूर्याचरण मनोरम मेरु, सबके मन को लोभ रहा।।5।।
मुनि ऋद्धिधर महातपस्वी, न्हवन जिनेश्वर का देखें।
निज समकित[1] को सुदृढ़ करते, जिन आगम यह उल्लेखें।।
पंचमेरु का व्रत पालें हम, पंचम गति को पायेंगे।
पंचमेरु व्रत पे 'आस्था' रख, पाँचों पाप नशायेंगे।।6।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ सर्व जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छंद)

श्री पंचमेरु श्रेष्ठ व्रत जो, भव्य श्रद्धा से करे।
वो ही श्रमण जिनराज बन, शिव सौख्य में झूला करें।।
'आस्था' धरें जिनराज पे, हम धर्म अनुरागी बनें।
त्रय गुप्तियों को साधके, हम मोक्ष के भागी बनें।।

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

1. सम्यक्दर्शन।

श्री विजय मेरु पूजा

(नरेन्द्र छंद)

पूर्व धातकी खंड द्वीप में, विजय मेरु मनहारी।
उसके सोलह चैत्यालय को, पूजें सुर नभचारी।।
उनमें मणियों वा रत्नों की, सुन्दर जिन प्रतिमायें।
उनका हम आह्वान करें नित, पुष्पाञ्जलि चढ़ायें।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकी खंड द्वीपस्थ विजय मेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्ब समूह ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानम्। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(शेर छंद)

क्षीरोदधि के जल से सर्व कुंभ भरायें।
जन्मादि रोग नाशने जिनवर को चढ़ायें।।
मेरु में दूसरा विजयश्री विजय दिलाये।
इसके सभी जिनालयों की भक्ति रचायें।।1।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकी खंड द्वीपस्थ विजय मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर गंध स्वर्ण मेरु पे चढ़ा रहे।
संसार ताप नाशने जिनवर को ध्या रहे।। मेरु....।।2।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकी खंड द्वीपस्थ विजय मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

भर-भर अखंड तंदुलों से अर्चना करें।
हम नाथ से अखंड पद की याचना करें।। मेरु....।।3।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकी खंड द्वीपस्थ विजय मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री विजय मेरु के प्रभु पे पुष्प चढ़ायें।
मन्मथ विजेता नाथ कामशत्रु नशायें।। मेरु....।।4।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकी खंड द्वीपस्थ विजय मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

रबड़ी मलाई रसभरी जिनवर को चढ़ायें।
आनंद रस की वापिका में डुबकी लगायें।।
मेरु में दूसरा विजयश्री विजय दिलाये।
इसके सभी जिनालयों की भक्ति रचायें।।5।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकी खंड द्वीपस्थ विजय मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कंचन समान मेरु की हम आरती गायें।
घृत दीप दान करके मोह ध्वांत नशायें।। मेरु....।।6।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकी खंड द्वीपस्थ विजय मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूपों के घटों में सुरेन्द्र धूप चढ़ायें ।
उन मेरु के बिम्बों को हम भी धूप चढ़ायें।। मेरु....।।7।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकी खंड द्वीपस्थ विजय मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

हर एक ऋतु के फलों से थाल सजाया।
जिनराज को पवित्र भावना से चढ़ाया।। मेरु....।।8।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकी खंड द्वीपस्थ विजय मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

थाली में अष्ट द्रव्य लेके नृत्य रचायें।
हम झूमते गाते प्रभु को अर्घ चढ़ायें।। मेरु....।।9।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकी खंड द्वीपस्थ विजय मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु विधान के 16 चैत्यालय के अर्घ

दोहा– पंचमेरु के सर्व जिन, जग में मंगलकार।
उनका यहाँ विधान कर, पायें शांति अपार।।

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(चौपाई)

दूजा मेरु विजय बताया, भद्रशाल वन पहला आया।
पूरब के जिनवर को ध्यायें, त्रय योगों से शीश नवायें।।1।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबंधि भद्रशाल वनस्थित पूर्वदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भद्रशाल वन दक्षिण प्यारा, बहती सदा सुखों की धारा।
दक्षिण के जिनवर को ध्यायें, सुर विद्याधर यजने आयें।।2।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबंधि भद्रशाल वनस्थित दक्षिणदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम भद्रशाल वन जायें, व्योम[1] शिखर तक ध्वज फहरायें।
श्रीफल ध्वज ले अर्घ चढ़ायें, झूमें नाचें भक्ति रचायें।।3।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबंधि भद्रशाल वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु है जग में आला, उत्तरदिश जिनभवन निराला।
मुनिगण निशदिन प्रभु को ध्यायें, हम जिनवर को अर्घ चढ़ायें।।4।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबंधि भद्रशाल वनस्थित उत्तरदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदन के नंदन बन जायें, वंदन करके पाप नशायें।
पूरब दिश चैत्यालय ध्यायें, अर्चा के शुभ भाव बनायें।।5।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबंधि नंदन वनस्थित पूर्वदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. आकाश।

नंदन वन दक्षिण दुःखहारी, उसमें चैत्य सदन सुखकारी।
उनको अर्चें शीश झुकायें, चैत्यालय को चित्त बसायें।।6।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबंधि नंदन वनस्थित दक्षिणदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ये अरण्य[1] पश्चिम दिग् न्यारा, नंदन का जो बना सितारा।
उसमें प्रभु को नमन हमारा, भवसागर से मिले किनारा।।7।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबंधि नंदन वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदन वन उत्तर दिश सोहे, ये सब भव्यों का मन मोहें।
लेकर रंग-बिरंगी थाली, प्रभु की पूजा भक्ति रचाली।।8।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबंधि नंदन वनस्थित उत्तरदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोम समान सोमनस प्यारा, पूर्व दिशा का मंदिर न्यारा।
जिनबिम्बों को खेचर[2] पूजें, नील गगन में जय-जय गूँजें।।9।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबंधि सोमनस वनस्थित पूर्वदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दक्षिण दिश में सुन्दर आलय[3], रत्नमयी है वहाँ जिनालय।
सूरज चंदा इनको ध्यायें, नीरादिक वसु द्रव्य चढ़ायें।।10।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबंधि सोमनस वनस्थित दक्षिणदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परचम[4] पश्चिम में लहराये, प्रभुवर हमको वहाँ बुलायें।
प्राँजल[5] जोड़ें प्रभु गुण गायें, अपने अवगुण दूर भगायें।।11।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबंधि सोमनस वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर दिश उत्तर नित देता, उस उत्तर के जिनवर नेता।
वीतराग जिनवर श्री देवा, करें वहाँ सुर खेचर सेवा।।12।।

1. वन, 2. विद्याधर, 3. स्थान, 4. ध्वजा, 5. दोनों हाथ।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबंधि सोमनस वनस्थित उत्तरदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पाण्डुक वन मेरु में चौथा, उसपे न्हवन नाथ का होता।
पूर्व दिशा के प्रभु को ध्यायें, भक्ति भाव से अर्घ चढ़ायें।।13।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबंधि पाण्डुक वनस्थित पूर्वदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दक्षिण विजयगिरि मनहारी, प्रतिमा प्रभु की मंगलकारी।
दीप धूप ले आरती गायें, त्रय योगों से अर्घ चढ़ायें।।14।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबंधि पाण्डुक वनस्थित दक्षिणदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम दिश में सुरगण आये, सब अपनी किरणें फैलायें।
फेरी हम सब नित्य लगायें, प्रभु को ध्यायें अर्घ चढ़ायें।।15।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबंधि पाण्डुक वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पाण्डुक के उत्तर दिश जायें, प्रभु का न्हवन करें करवायें।
मुक्ति की मंजिल हम पायें, जिन चरणों की भक्ति रचायें।।16।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबंधि पाण्डुक वनस्थित उत्तरदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ (नरेन्द्र छंद)

विजय मेरु के जिन भवनों में, सोलह जिन प्रतिमायें।
सब जिनवर की पूजा करने, परिजन संग सुर आयें।।
चार वनों में सर्व श्रेष्ठ वन, पाण्डुक वन कहलाता।
सुरपति बाल प्रभु को लाकर, इस वन में नहलाता।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1728 जिनबिम्बों का पूर्णार्घ (नरेन्द्र छंद)

दूजा मेरु विजय मनोहर, चार वनों से घिरा हुआ।
वन की शोभा बड़ी निराली, फल फूलों से खिला हुआ।।
उस मेरु के मध्य विराजी, श्री जिनवर की प्रतिमायें।
सत्रह सौ अट्ठाईस प्रभु की, हम पूजन करने आये।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ मध्य विराजमान एक सहस्र सप्तशताष्टाविंशति जिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– पूर्व धातकी खंड के, विजय मेरु के नाथ।
शांतिधार पुष्पाञ्जलि, करूँ विनय के साथ।।

शांतये शांतिधारा...दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

जाप्य मंत्र–ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु संबंधि अशीति जिनालय जिनबिम्बेभ्यो नमः स्वाहा। (9, 27 या 108 बार जाप करें।)

जयमाला

दोहा– विजयमेरु के जिन भवन, रत्नमयी भगवान।
चैत्य बनें सोलह जहाँ, उनका करें बखान।।

(शंभु छंद)

पूरब में खड़ा विजय मेरु, ये खंड धातकी में आता।
इसकी सुन्दरता के आगे, सूरज भी फीका पड़ जाता।।
बहु रंगों की आभा इसकी, नाना मणियों से चमक रहा।
कर्मों से विजय दिलाने को, मानो ये मेरु दमक रहा।।1।।

इस मेरु पे वन चार कहे, चारों में चैत्यालय शोभें।
इक वन में चारों दिश प्रतिमा, सोलह प्रतिमायें मन लोभें।।
मंदिर की शोभा मनहारी, तोरणद्वारों से युक्त कही।
मोती झालर घंटी वाली, बंधन मालाएँ लटक रही।।2।।

फानुस लगे हैं जगह-जगह, जगमग दीपों की ज्योति लगे।
रत्नों की राशि देख-देख, भव्यों का मिथ्या मोह भगे।।
प्रभु की वेदी के आगे ही, सुन्दर चंदेवा लगा हुआ।
ॐकार नाद करता घंटा, प्रभु के दरवाजे टंगा हुआ।।3।।

सुन्दर चौंसठ जब चँवर ढुँरे, ऊपर नीचे लहराते हैं।
श्री तीन लोक के जिनवर की, यश कीर्ति को फैलाते हैं।।
इस विजय मेरु के मंदिर में, नित विजय पताका फहराये।
इस पंचमेरु की पूजा में, हम विजय पताका ले आये।।4।।

यह मेरु चौरासी सहस्र, योजन ऊँचा बतलाया है।
श्री भद्रसाल से पाँच शतक, श्री नंदन वन बतलाया है।।
साढ़े सहस्र पचपन योजन, ऊपर सुमनस वन आता है।
योजन अट्ठाइस सहस बाद, चौथा पाण्डुक वन आता है।।5।।

इस मेरु के पाण्डुक वन में, सुर बाल प्रभु को लाता है।
अभिषेक नाथ का कर करके, सातिशय पुण्य कमाता है।।
हम भी वह पुण्य कमाने को, पुष्पाञ्जलि व्रत को अपनायें।
संयम समता त्रय गुप्तिधर, 'आस्था' से सम्यक् गुण पायें।।6।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीपस्थ विजय मेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ सर्व जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छंद)

श्री पंचमेरु श्रेष्ठ व्रत जो, भव्य श्रद्धा से करे।
वो ही श्रमण जिनराज बन, शिव सौख्य में झूला करें।।
'आस्था' धरें जिनराज पे, हम धर्म अनुरागी बनें।
त्रय गुप्तियों को साधके, हम मोक्ष के भागी बनें।।

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

श्री अचल मेरु पूजा

(नरेन्द्र छंद)

खंड धातकी पश्चिम दिश में, अचल मेरु है स्वर्णमयी।
जिनमंदिर सोलह बतलाये, उनमें प्रतिमा रत्नमयी।।
सुर विद्याधर यक्ष यक्षिणी, ध्याते मुनि ऋद्धिधारी।
हम उनका आह्वान करें नित, पूजा प्रभु की सुखकारी।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिम धातकी खंड द्वीपस्थ अचल मेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्ब समूह ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानम्। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(काव्य छंद)

स्वर्ण रजत के कुंभ जल से भरकर लाये।
पाने भवदधि तीर प्रभु पद नीर चढ़ायें।।
अचल मेरु के सर्व चैत्यालय मनहारी।
उनकी पूजा श्रेष्ठ जग मंगल हितकारी।।1।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकी खंड द्वीपस्थ अचल मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

ले चंदन कर्पूर केसर संग घिसायें।
प्रभु पद चंदन लेप भव आताप नशायें।। अचल मेरु...।।2।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकी खंड द्वीपस्थ अचल मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत पुंज चढ़ाय अचल मेरु को ध्यायें।
क्षायिक पद अविराम प्रभु पूजा से पायें।। अचल मेरु...।।3।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकी खंड द्वीपस्थ अचल मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

चारों वन से पुष्प चुन-चुनकर हम लाये।
सोलह जिनगृह जाय पुष्पाञ्जलि बरसायें।।
अचल मेरु के सर्व चैत्यालय मनहारी।
उनकी पूजा श्रेष्ठ जग मंगल हितकारी।।4।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकी खंड द्वीपस्थ अचल मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पय घृत की सुस्वादु प्रासुक बनी मिठाई।
क्षुधा नशाने हेत जिनवर तुम्हें चढ़ाई।। अचल मेरु...।।5।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकी खंड द्वीपस्थ अचल मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जगमग दीप अपार जिनवर के दर लायें।
कर आरती मनहार ज्ञानवान बन जायें।। अचल मेरु...।।6।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकी खंड द्वीपस्थ अचल मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट धातु का कुंभ सुन्दर दशमुख वाला।
उसमें अर्पें धूप फेरें हम प्रभु माला।। अचल मेरु...।।7।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकी खंड द्वीपस्थ अचल मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आम जाम अभिराम[1] बदरी फल हम लाये।
लेकर फल रसदार श्री जिनेन्द्र को ध्यायें।। अचल मेरु...।।8।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकी खंड द्वीपस्थ अचल मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ बनाया आज आठों ही द्रव्यों का।
कर प्रभु का गुणगान भाग्य जगे भव्यों का।। अचल मेरु...।।9।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकी खंड द्वीपस्थ अचल मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. सुन्दर।

अचल मेरु विधान के 16 चैत्यालय के अर्घ

दोहा– पंचमेरु के सर्व जिन, जग में मंगलकार।
उनका यहाँ विधान कर, पायें शांति अपार।।

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(अर्द्ध नरेन्द्र छंद)

अचलमेरु का भद्रशाल वन, प्रथम दिशा पूरब है।
उनको अर्घ चढ़ायें जिसमें, रत्नमयी मूरत है।।1।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबंधि भद्रशाल वनस्थित पूर्वदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शाश्वत अचल गिरि की प्रतिमा, अति मनोज्ञ मनहारी।
दक्षिण दिश में बना जिनालय, पूजें सुर नभचारी।।2।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबंधि भद्रशाल वनस्थित दक्षिणदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचल मेरु के पश्चिम दिश में, सप्तछंद युत मंदिर।
अपलक दृष्टि प्रभु तुम्हारी, जहाँ–जहाँ जिन मंदिर।।3।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबंधि भद्रशाल वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर दिश में अचल शैल पे, जिनमंदिर अतिशायी।
महापुण्य से मिले वंदना, अर्चा मोक्ष प्रदायी।।4।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबंधि भद्रशाल वनस्थित उत्तरदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचल मेरु के नंदन वन में, पूरब दिश की लाली।
चम–चम करता सदा जिनालय, रहती सदा दिवाली।।5।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबंधि नंदन वनस्थित पूर्वदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

होता जब आराधन प्रभु का, दक्षिण दिश नंदन में।
वंदन करते सर्व प्रभु को, अर्घ धरें चरणन् में।।6।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबंधि नंदन वनस्थित दक्षिणदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम की पुरवाई प्यारी, मन को मोहित करती।
प्रभु को छुती पावन वायु, पाप तिमिर नित हरती।।7।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबंधि नंदन वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर दिश के चैत्य बिम्ब को, हमने अर्घ चढ़ाया।
प्रभु की पावन मुख मुद्रा को, अपने चित्त बसाया।।8।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबंधि नंदन वनस्थित उत्तरदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रेष्ठ सोमनस के पूरब में, अति सुन्दर जिन प्रतिमा।
मोक्ष महल तक ले जाती है, प्रभु पूजा की महिमा।।9।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबंधि सोमनस वनस्थित पूर्वदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विपिन[1] सोमनस दक्षिण दिश में, जिनवर जगत् विजेता।
आठों याम उन्हें हम पूजें, बनने त्रिभुवन नेता।।10।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबंधि सोमनस वनस्थित दक्षिणदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु शिखर की सब रचनायें, अकृत्रिम बतलायी।
पश्चिम दिग् के तीर्थेश्वर की, प्रतिमायें मन भायी।।11।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबंधि सोमनस वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जन-जन का कल्याण करें जिन, इनके दर जो आये।
मुनिगण उत्तर दिश के प्रभु का, दर्शन कर सुख पायें।।12।।

1. वन।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबंधि सोमनस वनस्थित उत्तरदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वन में उत्तर पाण्डुक वन ये, सर्वश्रेष्ठ कहलाता।
पूर्व दिशा की जिन प्रतिमा को, मनवा शीश झुकाता॥13॥

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबंधि पाण्डुक वनस्थित पूर्वदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दक्षिण वन में जो जन जायें, प्रभु के दर्शन पायें।
हम भी जिन अभिषेक रचाने, पाण्डुक वन में जायें॥14॥

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबंधि पाण्डुक वनस्थित दक्षिणदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पाण्डुक वन की पश्चिम दिश में, दुंदुभि बाजे बाजे।
आठों मंगल द्रव्य मनोहर, जिन पूजा में साजे॥15॥

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबंधि पाण्डुक वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचल गिरि के उत्तर दिश में, पाठ ठाठ से होता।
प्रभुवर की पूजन करने से, जीवन पावन होता॥16॥

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबंधि पाण्डुक वनस्थित उत्तरदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ (शेर छंद)

श्री बाल प्रभु के चरण इस मेरु पे पड़े।
अभिषेक करने नाथ का सुर देवगण खड़े॥
षोडश प्रभु के मंदिरों में घंटिया बजें।
लेकर के अष्ट द्रव्य भक्त नाथ को भजें॥

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1728 जिनबिम्बों का पूर्णार्घ (शेर छंद)

मेरु अचल के मध्य में जिनराज हमारे।
मुनिराज भी आकर यहाँ पे कर्म विदारें।।
सत्रह सौ अट्ठाईस प्रभु को शीश झुकायें।
सुर-नर खगेन्द्र भक्त सभी पूजने आयें।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ मध्ये विराजमान एक सहस्र सप्तशताष्टाविंशति जिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- शाश्वत मेरु अचल की, प्रतिमा को सिर टेक।
हे जिनवर ! तव चरण में, पायें शांति विशेष।।

शांतये शांतिधारा

दोहा- सभी जिनालय द्वार पे, तोरणद्वार बंधाय।
पुष्पों से सज्जित करें, अचल मेरु पे जाय।।

दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

जाप्य मंत्र-ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु संबंधि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो नमः स्वाहा। (9, 27 या 108 बार जाप करें।)

जयमाला

सोरठा- मेरु अचल शुभ नाम, जयमाला इसकी पढ़ें।
पायें सुख अविराम, दर्शन पूजन से सदा।।

(अवतार छंद)

ये मेरु तीरथ धाम, इसको नमन करें।
पावन है इसका नाम, इसका भजन करें।।
ये मेरु अचल कहाय, सोने सा चमके।
जो इसका दर्शन पाय, प्रभु सम वो चमके।।1।।

है अपर धातकी खण्ड, उसमें मेरु 'अचल'।
सब सुर-नर से यह वंद्य, कहते शास्त्र अमल।।
हो यहाँ जन्म अभिषेक, तीर्थंकर जिन का।
करता है शक्र विशेष, उत्सव से उनका।।2।।

इसमें भी वन हैं चार, सर्व सुरम्य लगे।
इक वन में प्रतिमा चार, सर्व मनोज्ञ लगे।।
गजदंत और वक्षार, इनमें जिन प्रतिमा।
विजयार्ध कुलाचल चार, उनकी जिन प्रतिमा।।3।।

इन सबकी भक्ति रचाय, मंगल वाद्य बजा।
जयघोष लगा हर्षाय, वसु विधि द्रव्य सजा।।
मेरु का अद्भुत रूप, सबके मन बसता।
शाश्वत है श्रेष्ठ अनूप, सबके दुःख नशता।।4।।

जहँ मानस्तम्भ महान्, घंटी ध्वज वाले।
सब चैत्यालय सुख खान, जिन प्रतिमा वाले।।
हम सब प्रतिमा को पूज, अविचल पद पायें।
षोडश जिनवर के द्वार, 'आस्था' शिर नाये।।5।।

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छंद)

श्री पंचमेरु श्रेष्ठ व्रत जो, भव्य श्रद्धा से करे।
वो ही श्रमण जिनराज बन, शिव सौख्य में झूला करें।।
'आस्था' धरें जिनराज पे, हम धर्म अनुरागी बनें।
त्रय गुप्तियों को साधके, हम मोक्ष के भागी बनें।।

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

श्री मंदर मेरु पूजा

(गीता छंद)

श्री मेरु मंदर सुख समंदर, मंदिरों से शोभता।
सोलह जिनालय से सजा, सुर खेचरों को लोभता।।
शाश्वत अकृत्रिम मेरु ये, बहु रत्नमय अविराम है।
उस मेरु का आह्वान है, जिसपे बसे भगवान हैं।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्व पुष्करार्ध द्वीपस्थ मंदर मेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्ब समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानम्। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(अवतार छंद)

झारी में भरकर नीर, प्रभु पद में डालें।
टूटे कर्मन् जंजीर, सब दुःख विनशा लें।।
मंदर में मंदिर भव्य, चैत्यालय प्यारे।
सोलह प्रभु सुख दो नव्य[1], आये हम द्वारे।।1।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्व पुष्करार्ध द्वीपस्थ मंदर मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

ले अष्टगंध कर्पूर, जिन पद में चर्चें।
भवताप करो जिन दूर, हम तव पद अर्चें।। मंदर...।।2।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्व पुष्करार्ध द्वीपस्थ मंदर मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शुचि इंदुकांति सम श्वेत, मोती हम लाये।
अक्षय सुख पाने हेत, जिनवर को ध्यायें।। मंदर...।।3।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्व पुष्करार्ध द्वीपस्थ मंदर मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

1. नया।

बेला गुलाब कचनार, अर्पित प्रभुवर को।
हरने निज काम विकार, पूजें जिनवर को।।
मंदर में मंदिर भव्य, चैत्यालय प्यारे।
सोलह प्रभु सुख दो नव्य, आये हम द्वारे।।4।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्व पुष्करार्ध द्वीपस्थ मंदर मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मोती सम सुन्दर गोल, ये मोदक प्यारे।
अर्पित प्रभु को जय बोल, रोग क्षुधा हारे।। मंदर...।।5।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्व पुष्करार्ध द्वीपस्थ मंदर मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपों से मेरु सजाय, दीपोत्सव करते।
आरतियाँ प्रभु की गाय, मोह-तिमिर हरते।। मंदर...।।6।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्व पुष्करार्ध द्वीपस्थ मंदर मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

है जिन का सुन्दर रूप, उनको ध्यायेंगे।
पाने वह आत्म स्वरूप, धूप चढ़ायेंगे।। मंदर...।।7।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्व पुष्करार्ध द्वीपस्थ मंदर मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

केला अमरुद अनार, आमादिक लाये।
वरने मुक्तिपथ द्वार, जिन अर्चा गायें।। मंदर...।।8।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्व पुष्करार्ध द्वीपस्थ मंदर मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन पूजा में त्रयकाल, अर्घ सजायेंगे।
हम बजा-बजा करताल, अर्घ चढ़ायेंगे।। मंदर...।।9।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्व पुष्करार्ध द्वीपस्थ मंदर मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदर मेरु विधान के 16 चैत्यालय के अर्घ

दोहा– पंचमेरु के सर्व जिन, जग में मंगलकार।
उनका यहाँ विधान कर, पायें शांति अपार।।

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(सखी छंद)

पूरब दिश मेरु मंदर, हम जायें उसके अंदर।
लगता है सबसे सुन्दर, ये भद्रसाल का मंदर।।1।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबंधि भद्रशाल वनस्थित पूर्वदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदर के दक्षिण वन में, बैठे हैं जिनवर उसमें।
आभा है रत्नों जैसी, वे सबके परम हितैषी।।2।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबंधि भद्रशाल वनस्थित दक्षिणदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम दिश में हम जायें, वे जिनवर हमें बुलायें।
तुम जिनवर जग के स्वामी, हम पूजें अन्तर्यामी।।3।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबंधि भद्रशाल वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर मंदर के आलय, हम पूजें आज जिनालय।
नीरादिक द्रव्य चढ़ायें, शुभ ध्यान लगा सुख पायें।।4।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबंधि भद्रशाल वनस्थित उत्तरदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु मंदर का नंदन, पूरब दिश प्रभु को वंदन।
बनने प्रभु का लघुनंदन, वसु द्रव्य चढ़ाकर वंदन।।5।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबंधि नंदन वनस्थित पूर्वदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदन के दक्षिण दिश में, रत्नों का मंदिर जिसमें।
जिनका दर्शन मन भावन, भक्तों को करता पावन।।6।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबंधि नंदन वनस्थित दक्षिणदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम दिश में हरियाली, जिनभक्ति दे खुशहाली।
जो जिनवर को आराधें, वो अपने पाप विराधें।।7।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबंधि नंदन वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री जिनवर उत्तर वन के, हम पूजें जिन को मन से।
हम उनको निशदिन ध्यायें, अति उत्तम भक्ति रचायें।।8।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबंधि नंदन वनस्थित उत्तरदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ये सौम्य सोमनस प्यारा, अति उत्तम प्रभु का द्वारा।
पूरब दिश मंगलकारी, प्रभु चैत्यालय सुखकारी।।9।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबंधि सोमनस वनस्थित पूर्वदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वन चंदन सा महके हैं, खुश्बू दश दिश फैले हैं।
चंदन जिन चरण चढ़ायें, दक्षिण दिश में हम जायें।।10।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबंधि सोमनस वनस्थित दक्षिणदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दक्षिण के आगे पश्चिम, मंदिर का मुख भी पश्चिम।
प्रभु का मुख मंडल प्यारा, स्वीकारों नमन हमारा।।11।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबंधि सोमनस वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देवालय के परमेश्वर, उत्तर दिश के तीर्थेश्वर।
मुक्ति दे दो सर्वेश्वर, नमते हम सर्व जिनेश्वर।।12।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबंधि सोमनस वनस्थित उत्तरदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शिवपुर की कठिन डगरिया, है प्रभु की दूर नगरिया।
पूरब दिश के जिनदेवा, हम करें चरण की सेवा।।13।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबंधि पाण्डुक वनस्थित पूर्वदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुर ललनायें सब नाचें, उनकी पैजनिया बाजे।
दक्षिण में नाथ विराजे, प्रभु के दर बजते बाजे।।14।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबंधि पाण्डुक वनस्थित दक्षिणदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हे पश्चिम के परमातम, हे शुद्ध बुद्ध ! शुद्धातम।
हम पाने निज परमातम, हम ध्यायें नित परमातम।।15।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबंधि पाण्डुक वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर दिश के जगत्राता, करुणा निधि आनंद दाता।
आश्रयदाता तुम स्वामी, पूजें मुनि गणधर नामी।।16।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबंधि पाण्डुक वनस्थित उत्तरदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ (अडिल्ल छंद)

मंदर मेरु के जिनवर को पूजते।
प्रभु पूजा से भव के बंधन छूटते।।
इस मेरु पे सोलह चैत्यालय कहे।
आठों मंगल द्रव्यों से शोभित रहे।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1728 जिनबिम्बों का पूर्णार्घ (अडिल्ल छंद)

इस मेरु पे और अनेकों हैं प्रभु।
सत्रह सौ अट्ठाईस हैं जिनवर विभू।।
मेरु के दर्शन को आते जिनगुरु।
प्रभु भक्ति से करते हम जीवन शुरू।।

ॐ ह्रीं श्री मन्दर मेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ मध्ये विराजमान एक सहस्र सप्तशताष्टाविंशति जिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– मंदर मेरु के प्रभु, करो शांति विस्तार
शांतिपथ दर्शक विभू, वंदन बारम्बार।।

शांतये शांतिधारा

दोहा– सुर असुरों से पूज्य हैं, मेरु के जिनराय।
उनका अभिवादन करें, चरणन् पुष्प चढ़ाय।।

दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

जाप्य मंत्र–ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु संबंधि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो नमः स्वाहा। (9, 27 या 108 बार जाप करें।)

जयमाला

सोरठा– मंदर मेरु जान, गुण कीर्त्तन इसका करें।
इसकी कीर्ति महान्, सुर–असुरों से पूज्य है।।

(पद्धरि छंद)

जय मंदर मेरु सुभग जान, इसका मुनिगण करते बखान।
आगम में इसका विशद ज्ञान, मेरु शान्ति का पायदान।।1।।

इस मेरु पे वन चार–चार, हर दिश में प्रतिमा चार–चार।
सुन्दर रत्नों की चमकदार, प्रतिमायें करती चमत्कार।।2।।

यह मेरु पुष्कर के सुपूर्व, भव्यों को लगता है अपूर्व।
सब देव देवियाँ गीत गाय, संगीत नृत्य घूमर रचाय॥3॥

घुंघरु की रुनझुन झनन झान, वीणा की बजती तनन तान।
नाचत गावत प्रभु को रिझाय, कोटा कोटी बाजे बजाय॥4॥

प्रभु का उज्ज्वल नाटक दिखाय, जीवन चरित्र मंचन कराय।
प्रभु दर्शन से सम्यक्त्व पाय, सम्यक्दर्शन मुक्ति दिलाय॥5॥

मुनिगण घटना जिनकी बताय, उसको सुनके वैराग्य आय।
प्रभु की महिमा सुन्दर सुनाय, कानों को अमृत रस पिलाय॥6॥

जिन का अति उत्तम पुण्य आय, वे ही मेरु के दर्श पाय।
अतिशय ये प्रभुवर का कहाय, उनके चरणों में भव्य आय॥7॥

इसके व्रत आते तीन बार, धारों प्राणी विश्वास धार।
गुरु सन्निध में व्रत लेय भव्य, पाओ उत्तम सुख नव्य-नव्य॥8॥

ऐसे मेरु को शीश नाय, प्रभु प्रतिमा को मन में बसाय।
हम अर्घ थाल उत्तम सजाय, अर्चा कर जिनवर को चढ़ाय॥9॥

मेरु पे अर्पें पुष्पहार, फिर धारें अपने कण्ठ हार।
'आस्था' श्री पाँचों मेरु ध्याय, अविराम मोक्षपुर धाम जाय॥10॥

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छंद)

श्री पंचमेरु श्रेष्ठ व्रत जो, भव्य श्रद्धा से करे।
वो ही श्रमण जिनराज बन, शिव सौख्य में झूला करें॥
'आस्था' धरें जिनराज पे, हम धर्म अनुरागी बनें।
त्रय गुप्तियों को साधके, हम मोक्ष के भागी बनें॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

श्री विद्युन्माली मेरु पूजा

दोहा– विद्युन्माली मेरु को, पश्चिम दिश में जान।
सोलह चैत्य जिनेश का, करता मैं आह्वान।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिम पुष्करार्ध द्वीपस्थ विद्युन्माली मेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्ब समूह ! अत्र अवतर–अवतर संवौषट् आह्वानम्।

दोहा– करता हूँ स्थापना, जागा पुण्य विशेष।
पूजा करके नाथ की, प्राप्त करूँ जिनवेश।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिम पुष्करार्ध द्वीपस्थ विद्युन्माली मेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्ब समूह ! अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः–ठः स्थापनम्।

दोहा– जिनपद मेरे मन बसे, मैं जिन पद का दास।
जिन चरणों में नित रहूँ, यही करूँ अरदास।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिम पुष्करार्ध द्वीपस्थ विद्युन्माली मेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्ब समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(अडिल्ल छंद)

हेम कलश में निर्मल जल भर ला रहा।
श्री जिन चरण कमल में नीर चढ़ा रहा।।
विद्युन्माली मेरु को निशदिन जजूँ।
उनके सोलह चैत्यालय को भी भजूँ।।1।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिम पुष्करार्ध द्वीपस्थ विद्युन्माली मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

केशर चंदन से प्रभु के पद चर्चता।
भव आताप मिटाने प्रभु को अर्चता।। विद्युन्माली...।।2।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिम पुष्करार्ध द्वीपस्थ विद्युन्माली मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शशि सम उज्ज्वल अक्षत मुक्ता ला रहा।
परमोज्ज्वल पद पाने पुंज चढ़ा रहा।। विद्युन्माली...।।3।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिम पुष्करार्ध द्वीपस्थ विद्युन्माली मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

विविध वर्ण के पुष्प सजा कर ला रहा।
मेरु के जिनवर को आज चढ़ा रहा।।
विद्युन्माली मेरु को निशदिन जजूँ।
उनके सोलह चैत्यालय को भी भजूँ।।4।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिम पुष्करार्ध द्वीपस्थ विद्युन्माली मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

बरफी पेड़ा और इमरती ला रहा।
चढ़ा प्रभु को क्षुधा रोग विनशा रहा।। विद्युन्माली...।।5।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिम पुष्करार्ध द्वीपस्थ विद्युन्माली मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्ण थाल में रत्नमयी दीपक लगे।
करूँ आरती नाथ मोह मेरा भगे।। विद्युन्माली...।।6।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिम पुष्करार्ध द्वीपस्थ विद्युन्माली मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्निपात्र में धूप दशांगी खे रहा।
कर्म नशाने प्रभु की शरणा ले रहा।। विद्युन्माली...।।7।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिम पुष्करार्ध द्वीपस्थ विद्युन्माली मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

विविध फलों की लेकर सुन्दर थालियाँ।
चढ़ा प्रभु को बजा रहा मैं तालियाँ।। विद्युन्माली...।।8।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिम पुष्करार्ध द्वीपस्थ विद्युन्माली मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम वसुधा पाने मैं पूजन करूँ।
आठों द्रव्य चढ़ा प्रभु का कीर्त्तन करूँ।। विद्युन्माली...।।9।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिम पुष्करार्ध द्वीपस्थ विद्युन्माली मेरु सम्बन्धि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्युन्माली मेरु के 16 चैत्यालय के अर्घ

दोहा– पंचमेरु के सर्व जिन, जग में मंगलकार।
उनका यहाँ विधान कर, पायें शांति अपार।।

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(अडिल्ल छंद)

भद्रसाल वन पूर्व दिशा शुभ नाम है।
श्री जिनवर को बारम्बार प्रणाम है।।
विद्युन्माली मेरु को वंदन करें।
उनमें राजे जिनवर का अर्चन करें।।1।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबंधि भद्रशाल वनस्थित पूर्वदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भद्रसाल के दक्षिण जिन को ध्याइयें।
आठों द्रव्य चढ़ाकर पुण्य कमाइयें।। विद्युन्माली...।।2।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबंधि भद्रशाल वनस्थित दक्षिणदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम दिश का मंदिर है मनभावना।
जो पूजें उसकी हो पूरी कामना।। विद्युन्माली...।।3।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबंधि भद्रशाल वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर दिश के जिनगृह मुनिगण ध्या रहे।
कर्म काट के वो सिद्धालय जा रहे।। विद्युन्माली...।।4।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबंधि भद्रशाल वनस्थित उत्तरदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(शंभु छंद)

नंदन वन के पूरब दिश में, जिन मंदिर एक विशाल बना।
मेरु के चारों ओर यहाँ, मणियुत जिन मानस्तम्भ बना।।

विद्युन्माली का नंदन वन, इसकी प्रतिमायें रत्नों की।
उनकी पूजा करने हेतु, बहु टोली आती भक्तों की।।5।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबंधि नंदन वनस्थित पूर्वदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दक्षिण दिश के जिन की पूजा, सुर किन्नरियाँ आकर करती।
पुष्पों की माला कर में ले, जिन चरणों में अर्पण करती।। विद्युन्माली..।।6।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबंधि नंदन वनस्थित दक्षिणदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम दिश में संगीत नाद, बहु वाद्यों संग वीणा बाजे।
जिनवर के चरण कमल में हम, कमलादिक भेंट करें ताजे।। विद्युन्माली..।।7।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबंधि नंदन वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रतिमायें पाँच शतक धनु हैं, हर चैत्यालय के मेरु की।
उत्तर दिश के श्री जिनवर की, जय हो प्रभु संग उस मेरु की।। विद्युन्माली..।।8।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबंधि नंदन वनस्थित उत्तरदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई : आँचलीबद्ध

(तर्ज : आठ दरबमय... पंचमेरु पूजा की राग..)

पूरब दिश चैत्यालय जान, करते हम प्रभु का गुणगान।
दरश मिल जाय, सब जिनवर को अर्घ चढ़ाय।।
विद्युन्माली मेरु सुहाय, उसकी पूजा भक्ति रचाय।
दरश मिल जाय, सब जिनवर को अर्घ चढ़ाय।।9।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबंधि सौमनस वनस्थित पूर्वदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दक्षिण देवारण्य महान्, चैत्यालय में जिन भगवान।
दरश मिल जाय, सब जिनवर को अर्घ चढ़ाय।। विद्युन्माली..।।10।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबंधि सौमनस वनस्थित दक्षिणदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्राता दाता सबके नाथ, पश्चिम दिश के हैं जगनाथ।
दरश मिल जाय, सब जिनवर को अर्घ चढ़ाय।।
विद्युन्माली मेरु सुहाय, उसकी पूजा भक्ति रचाय।
दरश मिल जाय, सब जिनवर को अर्घ चढ़ाय।।11।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबंधि सौमनस वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तोरण घंटा वाद्य चढ़ाय, उत्तर दिश के जिन को ध्याय।
दरश मिल जाय, सब जिनवर को अर्घ चढ़ाय।। विद्युन्माली..।।12।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबंधि सौमनस वनस्थित उत्तरदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चामर छंद)

पूर्व की दिशा बड़ी जहाँ जिनेश नाथ हैं।
आपके सुपाद में झुका रहे सुमाथ ये।।
देव-देवियाँ सदा सुमेरु को सुपूजते।
श्री जिनेश नाथ को सुभाव से सुवंदते।।13।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबंधि पाण्डुक वनस्थित पूर्वदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट द्रव्य ला रहे सुचैत्य पाण्डु है जहाँ।
दक्षिणी जिनेश को नरेश भी भजे यहाँ।। देव...।।14।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबंधि पाण्डुक वनस्थित दक्षिणदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री जिनेन्द्र आपको त्रिलोक नित्य पूजता।
पश्चिमी दिशी मनोज्ञ देव वृंद झूमता।। देव...।।15।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबंधि पाण्डुक वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तरी दिशा सुरम्य साधु साधना करें।
वंदना महार्चना जिनेश की सदा करें।। देव...।।16।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबंधि पाण्डुक वनस्थित उत्तरदिक् जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ (चौपाई)

मेरु सुंदर विद्युन्माली, पूजा की हम लायें थाली।
चारों वन की चार दिशायें, चारों में हैं जिन प्रतिमायें।।
भद्र सोमनस नंदन प्यारा, पाण्डुक वन है उनमें न्यारा।
इन्द्रादिक जिनवर को लाते, भक्ति भाव से न्हवन कराते।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1728 जिनबिम्बों का पूर्णार्घ (चौपाई)

एक-एक वन में हम जायें, एक शतक अठ जिन प्रतिमायें।
चारों वन की जिन प्रतिमायें, सत्रह सौ अट्ठाईस आये।।
रत्नमयी मन्दिर मनहारे, सुर विद्याधर पूजें सारे।
अष्ट द्रव्य ले पूजा गायें, पूजक से पूजित बन जायें।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ मध्य विराजमान एक सहस्र सप्तशताष्टाविंशति जिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- तीन लोक के ईश का, जपूँ सदा मैं नाम।
शांति करें जिनदेव सब, उनको करूँ प्रणाम।। शांतये शांतिधारा

दोहा- जल थल के बहु वर्ण के, सुरभित पुष्प मनोज्ञ।
पुष्प चढ़ा ये व्रत करूँ, होवे कर्म निरोध।। दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

जाप्य मंत्र-ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु संबंधि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो नमः स्वाहा। (9, 27 या 108 बार जाप करें।)

जयमाला

दोहा- विद्युन्माली शैल की, कहता हूँ जयमाल।
सर्व सुरों से पूज्य है, वंदन करूँ त्रिकाल।।

(गीता छंद)

मेरु शिखर के मंदिरों की, गा रहे जयमाल हैं।
प्रभु के गुणों की माल ही, शांति सुखों की माल है।।
सुन्दर सुसज्जित ये जिनालय, मन सभी का खींचते।
जो आ रहे प्रभु द्वार पे, संसार में वो जीतते।।1।।

इन मंदिरों के द्वार पे, बजती सदा शहनाईयाँ।
बहु देव-देवी अप्सरा, गाती पुनीत बधाईयाँ।।
बाजे अनेकों नित बजे, उत्सव करें नित देवगण।
अतिशायी भक्ति वे करें, पूजें सदा प्रभु के चरण।।2।।

आनंद जो जिन भक्ति में, संसार में मिलता नहीं।
जो लोक में सुख खोजता, उससे बड़ा मूरख नहीं।।
आनंद है जिन भक्ति में, जिनभक्ति ही आनंद है।
आनंद रस में डूबकर, पायें परम आनंद ये।।3।।

सोने रजत व रत्न के, जिन चैत्य में चित्रण बने।
रंगावली से चौक शोभे, रत्न जिसमें अनगिने।।
सुन्दर कपाट विशाल हैं, नक्कासी रत्नों की बनी।
सुन्दर सुवासित जिन सदन, नित पूजते सब सुर गणी।।4।।

अति भव्य वैभव नाथ का, उसका कथन कैसे करें।
जिनशास्त्र में अवलोक कर, मन ये कभी भी ना भरें।।
आकाश में उड़ती ध्वजा, वो कह रही आओ सभी।
जिननाथ के दरबार में, सब पुण्य कोष भरों सभी।।5।।

हम नित्य प्रभु के पाद में, मस्तक झुका वंदन करें।
बोधि समाधि प्राप्त हो, जिनगुण चरण वंदन वरें।।
आये प्रभु के द्वार पे, भवताप सब हर लो प्रभो।
जब तक न मुक्ति प्राप्त हो, बस दर्श हरदम दो विभो।।6।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबंधि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छंद)

श्री पंचमेरु श्रेष्ठ व्रत जो, भव्य श्रद्धा से करे।
वो ही श्रमण जिनराज बन, शिव सौख्य में झूला करें॥
'आस्था' धरें जिनराज पे, हम धर्म अनुरागी बनें।
त्रय गुप्तियों को साधके, हम मोक्ष के भागी बनें॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

जाप्य मंत्र–ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु संबंधि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो नमः स्वाहा। (9, 27 या 108 बार जाप करें।)

समुच्चय जयमाला

दोहा– अस्सी चैत्यालय महा, पंचमेरु के जान।
श्रद्धा से हम सब करें, जयमाला गुणगान॥

(नरेन्द्र छंद)

पंचमेरु के जिन भवनों की, जयमाला हम गायें।
अस्सी चैत्यालय मनहारी, उनको शीश झुकायें॥
एक–एक मेरु के ऊपर, सोलह जिन चैत्यालय।
सुर–नर–किन्नर भक्ति रचाते, जिनगुण में हो तन्मय॥1॥
ये पर्वत भी पूजें जाते, जिन चैत्यों के कारण।
अतिशयकारी मेरु शिखर ये, कण–कण इनका पावन॥
चार शिलायें पाण्डुक वन में, इनकी शोभा न्यारी।
ये चारों विदिशा में होती, अर्द्धचंद्र मनहारी॥2॥
वसु योजन इनकी ऊँचाई, सौ योजन लम्बाई।
ये पचास योजन चौड़ी हैं, सब समान कहलायी॥
सर्व शिला पे तीन सिंहासन, पाँच शतक धनु[1] ऊँचे।
चौड़ाई भी पंच शतक धनु, रत्नमयी मन रूचे॥3॥

1. धनुष।

पंचमेरु के पाण्डुक वन में, सुर-गण प्रभु को लाते।
होता जब अभिषेक प्रभु का, मुनि ऋद्धिधर आते।।
कर्मभूमि के नर-नारी भी, पंचमेरु पे जाते।
दर्शन पूजन कर जिनवर के, बिन माँगें सब पाते।।4।।

सबसे बड़ा सुमेरु पर्वत, अन्य चार हैं छोटे।
चारों पे वन भी समान हैं, उनके नाम अनूठे।।
चैत्यालय भी इक समान हैं, उनका वैभव उत्तम।
ऐसे प्रभु का दर्शन पाकर, हमें मिले सुख उत्तम।।5।।

मेरु के वन में सब तरु हैं, चंपक आम सुपारी।
पक्षी गणों के मधुर स्वरों से, लगती शोभा न्यारी।।
देव भवन और कूट वापियाँ, वहाँ असंख्य बने हैं।
चारण मुनि भी जिन चरणों में, अघ तम दोष हने हैं।।6।।

पुष्पाञ्जलि व्रत दशलक्षण में, पाँच दिनों तक आये।
पाँच वर्ष तक करें भव्य जो, पंचम गति को पाये।।
पंचमेरु व्रत जो भी धारे, सुखमाला वो पाये।
त्रय गुप्तिधर कर्म नशाये, 'आस्था' मोक्ष उपाये।।7।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छंद)

श्री पंचमेरु श्रेष्ठ व्रत जो, भव्य श्रद्धा से करे।
वो ही श्रमण जिनराज बन, शिव सौख्य में झूला करें।।
'आस्था' धरे जिनराज पे, हम धर्म अनुरागी बनें।
त्रय गुप्तियों को साधके, हम मोक्ष के भागी बनें।।

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

विधान प्रशस्ति

मोतियादाम छंद

(तर्ज–मारने वाला है भगवान....)

श्री आदिशांतिनाथ जिनराज, नमन है तुमको मेरा आज।
नमन है चौबीसों जिनराज, नमन है गणधर गुरु को आज।।1।।

नमन है जिनवाणी को आज, नमन है सब गुरुओं को आज।
नमन है कुंथु गुरु को आज, नमन है कनकनंदी को आज।।2।।

नमन है गुप्ति गुरु को आज, नमन है सब गुरुओं को आज।
लिखा रोहतक में भव्य विधान, पंचमेरु ये श्रेष्ठ विधान।।3।।

हुआ जिस दिन मुनियों का पर्व, पापहर रक्षाबंधन पर्व।
उसी दिन किया इसे आरंभ, मिटाने निज कर्मों का दंभ।।4।।

वीर सन् पच्चिस सौ अड़तीस, सामने श्री जिनवर शांतीश।
हुआ दशलक्षण पर्व महान, उसी दिन पूरण हुआ विधान।।5।।

किया इसका संपादन काज, सूर्यवर गुप्तिनंदी गुरुराज।
करूँ उनको वंदन त्रयकाल, मिले हमको उनकी गुणमाल।।6।।

हमें ना छंद शास्त्र का ज्ञान, भक्ति के वश हो लिखा विधान।
नमन है पंचमेरु को आज, नमन है सर्व प्रभु को आज।।7।।

मिले आशीष प्रभु का आज, पाने मोक्षपुरी का राज।
नमायें श्रद्धा से निज माथ, जोड़कर 'आस्था' दोनों हाथ।।8।।

दोहा– नभ में सूरज चंद्रमा, जब तक हैं मुनिराज।
हो मेरु की अर्चना, होवे जिन साम्राज।।

'इति अलम्'

पंचमेरु की आरती

(तर्ज – घुंघरु छम छमा छम बाजे रे...)

घुंघरु छम छमा छम छन नन नन नन बाजे रे, बाजे रे।
पंचमेरु की आरती करने दीपक लाये रे।। घुंघरु छम...

1. शाश्वत पंचमेरु की जग में, महिमा बड़ी निराली।
वहाँ हमेशा भव्य मनायें, होली और दीवाली।।
घुंघरु छम...

2. इन पाँचों मेरु पे होता, न्हवन सदा जिनवर का।
सुर-नर-किन्नर नाचें गावें, देख रूप जिनवर का।।
घुंघरु छम...

3. एक-एक मेरु पे सुन्दर, प्रभु के भव्य जिनालय।
सोलह-सोलह चैत्यालय ये, जिनभक्ति के आलय।।
घुंघरु छम...

4. ढाई द्वीप के पंचमेरु की, आरती हम सब गायें।
ढ़ोल नगाड़े वीणा लेकर, ताल मृदंग बजायें।।
घुंघरु छम...

5. जब होता अभिषेक प्रभु का, मुनि ऋद्धिधर आते।
तीर्थंकर बालक को लखकर, 'आस्था' भाव बढ़ाते।।
घुंघरु छम...

***

पंचमेरु चालीसा

दोहा- पंच परम परमेष्ठि को, वंदन बारम्बार।
पाँचों मेरु का पढ़े, चालीसा सुखकार।।
पाँचों मेरु का मिले, आगम में उल्लेख।
जिन पर होता है सदा, जिनवर का अभिषेक।।

चौपाई

पंचमेरु को नमन हमारा, करते हम उनका जयकारा।
इनमें बने जिनालय न्यारे, रत्नमयी सुन्दर मनहारे।।1।।
ढाई द्वीप में पाँच सुमेरु, जम्बूद्वीप में एक सुमेरु।
खण्ड धातकी में दो आते, विजय अचल मेरु कहलाते।।2।।
पुष्कर में होते दो मेरु, मंदर विद्युन्माली मेरु।
सब मेरु पे बने जिनालय, सुख शान्ति वैभव गुण आलय।।3।।
जम्बूद्वीप के मध्य सुमेरु, चार वनों से शोभे मेरु।
भद्रसाल नंदन सुखदायी, और सौमनस मंगलदायी।।4।।
चौथा वन पाण्डुक कहलाता, सब मेरु को शीश झुकाता।
चारों वन की चार दिशायें, चारों में हैं जिन प्रतिमायें।।5।।
वहाँ अनेकों भव्य जिनालय, वे सब हैं शाश्वत देवालय।
सुर-नर इनके दर्शन पाते, भव-भव के मिथ्यात्व नशाते।।6।।
मानस्तम्भ मणि सम चमके, स्वर्ण रत्न के तोरण खम्भे।
रहती जहाँ सदा हरियाली, भव्य मनाये यहाँ दीवाली।।7।।
चैत्यालय सबके मन मोहे, देवछंद मंडप पे सोहे।
चित्रों से चित्रित दरवाजे, दरवाजे पे बजते बाजे।।8।।
गिरी वक्षार कुलाचल प्यारे, इन पर हैं जिनबिम्ब हमारे।
गिरि गजदंत वापिका सरवर, रजताचल विजयार्ध मनोहर।।9।।
जहाँ अनेकों जिन प्रतिमायें, उनको हम सब शीश झुकायें।
प्रातिहार्य युत ये प्रतिमायें, यक्ष यक्षिणी दायें-बायें।।10।।

सर्व मेरु हैं अतिशयकारी, पूजा करते सब नर-नारी।
चारों मेरु समान बतायें, एक सुमेरु बड़ा कहाये॥11॥
रचना एक समान कहाती, माँ जिनवाणी हमें बताती।
महिमा मंडित मेरु सारे, त्रय लोकों में पूज्य हमारे॥12॥
हर मेरु पे पाण्डुक वन है, होता उसपे सदा न्हवन है।
जन्मे जब तीर्थंकर स्वामी, तीन लोक के अन्तर्यामी॥13॥
इन्द्र यहाँ प्रभुवर को लाता, सिंहासन पे उन्हें बिठाता।
चार दिशा में जिन प्रतिमायें, विदिशा में प्रभु को बैठायें॥14॥
फिर उनका अभिषेक करायें, इक हजार अठ कुम्भ ढुरायें।
इन्द्र-इन्द्राणी नाचें गायें, बाल प्रभु संग फाग उड़ायें॥15॥
सुरपति नयन हजार बनाये, बाल प्रभु को हृदय बसायें।
ऋद्धिधारी मुनिवर आयें, प्रभु का न्हवन देख हर्षायें॥16॥
पुण्यवान मानव भी जाते, श्री जिनवर के दर्शन पाते।
देव मित्र बन दर्श कराते, विद्याधर विद्या से जाते॥17॥
पंचमेरु का व्रत जो धारे, उनसे पंच पाप भी हारे।
पंच परावर्तन नश जाये, व्रत धारण कर शिव सुख पाये॥18॥
दुःख संकट पीड़ा मिट जाये, कर्मों के बन्धन कट जायें।
हे जिनवर ! हम तुम्हें पुकारें, सुनलो विनती नाथ हमारे॥19॥
पंचमेरु के दर्शन पायें, श्रद्धा से हम शीश झुकायें।
भक्ति कर भव भ्रमण नशायें, 'आस्था' से शाश्वत सुख पायें॥20॥

दोहा- चालीसा जिनराज का, चालीस दिन कर पाठ।
दीप धूप संग जाप कर, नाशें कर्मन आठ॥
तीन गुप्तियाँ सिद्ध हों, मिले मोक्ष का द्वार।
पंचमेरु को नित नमें, 'आस्था' बारम्बार॥

जाप्य मंत्र- ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु संबंधि सर्व जिनबिम्बेभ्यो नमः (9, 27, 108 बार जाप करें।)

अर्घावली

श्री जिनवाणी माता

(चामर छंद)

नीर गंध वस्त्र आदि अर्घ भाव से लिया।
आपका विधान मात भक्ति भाव से किया।।
दिव्य देशना महान है जिनेश आपकी।
मात अर्चना हरे प्रवंचना विभाव की।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतीवाग्वादिनीभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री गणाधिपति गणधर भगवान का अर्घ

(नरेन्द्र छंद)

कर्म अष्ट से लड़ने हेतु वेष दिगम्बर धार लिया।
क्षायिक पद की अभिलाषा से कर्म अरि पर वार किया।।
जल फल आदि आठ द्रव्य से करता प्रभु का अभिनंदन।
मुनिगण के स्वामी हैं गणधर उनका मैं करता अर्चन।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वगणधर परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ग. गणधराचार्य श्री कुन्थुसागरजी

(शेर छंद)

आचार्य कुंथु सिंधु हैं वात्सल्य दिवाकर।
हम धन्य-धन्य आज उनको अर्घ चढ़ाकर।।
जिनधर्म का डंका बजाना जिनका है धरम।
भक्ति से भक्त बोलो वंदे कुंथुसागरम्।।

ॐ ह्रीं गणाधिपति गणधराचार्य श्री कुन्थुसागरजी गुरुदेव चरणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनंदीजी

(जोगीरासा छंद)

कनकनंदी की ज्ञान रश्मियाँ ज्ञान किरण फैलाये।
वैज्ञानिक आचार्य हमारे सबको धर्म सिखाये।।
साम्य भाव ही सुख स्वभाव है यही गुरु बतलाये।
कनक रजत की थाल सजाकर गुरु को अर्घ चढ़ाये।।

ॐ ह्रीं वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनंदीजी गुरुदेव चरणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रज्ञायोगी आचार्य श्री गुप्तिनंदीजी गुरुदेव का अर्घ

(1) (शेर छंद)

आचार्य गुप्तिनंदी ने, कमाल कर दिया।
वात्सल्य से सभी को, मालामाल कर दिया।।
गुरुदेव मुस्कुराके, आशीर्वाद दीजिये।
पूजा हमारी आप ये, स्वीकार कीजिये।।

ॐ ह्रीं परम पूज्य आचार्य श्री गुप्तिनंदी गुरुदेव चरणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(2) (तर्ज - माईन-माईन....)

प्रज्ञायोगी गुप्तिनंदी, महाकवि गुणधारी।
आर्ष मार्ग की राह बतायें, जय हो गुरु तुम्हारी।।
बोलो गुप्तिनंदी की जय, बोलो कविहृदय की जय।
बोलो महाकवि की जय, बोलो धर्म सूर्य की जय।।
नीर गंध अक्षत पुष्पादि, अष्ट द्रव्य हम लाये।
कुंथु कनकनंदी के नंदन, तुमको अर्घ चढ़ायें।।
धर्म तीर्थ के प्रेरक गुरुवर-2, जन-जन के उपकारी।
हम सब तुमको शीश झुकायें, जय हो गुरु तुम्हारी।
बोलो गुप्तिनंदी की जय.....

ॐ ह्रीं परम पूज्य प्रज्ञायोगी, आर्षमार्ग संरक्षक, कविहृदय, धर्मक्रांति सूर्य, ज्ञान दिवाकर, व्याख्यान वाचस्पति, श्रावक संस्कार उन्नायक, महाकवि आचार्य श्री गुप्तिनंदी गुरुदेव चरणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय अर्घ

(शेर छंद)

मैं पूजता अरिहंत सिद्ध सूरि को सदा।
उवज्झाय सर्व साधु और शारदा मुदा।।
गणधर गुरु चरण की नित्य अर्चना करूँ।
दश धर्म सोलह भावना की अर्चना करूँ।।1।।

अरहंत भाषितार्थ दया धर्म को भजूँ।
श्री तीन रत्न रूप मोक्ष धर्म को जजूँ।।
त्रैलोक्य के कृत्रिम-अकृत्रिम चैत्य को ध्याऊँ।
चैत्यालयों का ध्यान लगा अर्घ चढ़ाऊँ।।2।।

सब सिद्ध क्षेत्र तीर्थ क्षेत्र को भजूँ सदा।
औ तीन लोक के समस्त तीर्थ सर्वदा।।
चौबीस जिनवरों व बीस नाथ को ध्याऊँ।
जल आदि अष्ट द्रव्य ले पूर्णार्घ चढ़ाऊँ।।3।।

दोहा : जल आदिक वसु द्रव्य की, लेकर आये थाल।
महाअर्घ अर्पण करें, प्रभु को नमें त्रिकाल।।

ॐ ह्रीं द्रव्य सहित भावपूजा भाववंदना त्रिकाल पूजा त्रिकाल वंदना करे करावै भावना भावै श्री अरहंतसिद्ध आचार्य उपाध्यायसर्वसाधु पंच परमेष्ठिभ्यो नमः। प्रथमानुयोग करणानुयोग चरणानुयोग द्रव्यानुयोगेभ्यो नमः। उत्तमक्षमादि दशलाक्षणिकधर्मेभ्यो नमः। दर्शनविशुद्धयादि षोडशकारणेभ्यो नमः। सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रेभ्यो नमः। विदेह क्षेत्रस्थ विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः। जल, थल, आकाश, गुफा, पहाड़, सरोवर, नगर-नगरी, ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक, अधोलोक स्थित कृत्रिम-अकृत्रिम जिनचैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो नमः। पाँच भरत पाँच ऐरावत संबंधी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनराजेभ्यो नमः। नंदीश्वर द्वीप संबंधी बावन जिनचैत्यालयेभ्यो नमः। पंचमेरू संबंधी

अस्सी जिनचैत्यालयेभ्यो नमः। सम्मेदशिखर, कैलाशगिरी, चंपापुर, पावापुर, गिरनार, सोनागिर, मथुरा, गजपंथा, मांगीतुंगी, तपोभूमि आदि सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः। जैनबद्री, मूढ़बद्री, देवगढ़, चंदेरी, पपौरा, हस्तिनापुर, अयोध्या, कुंथुगिरी, पुष्पगिरी, अंजनगिरी, धर्मतीर्थ, वरूर,राजगृही, तारंगा, चमत्कार, महावीरजी, पदमपुरा, तिजारा, अहिच्क्षेत्र, कचनेर, जटवाड़ा, पैठण, गोम्मटेश्वर, चंवलेश्वर, बिजौलिया, चांदखेड़ी, पाटन, कुण्डलपुर, अणिन्दा वृषभदेव णमोकार ऋषि तीर्थ आदि अतिशय क्षेत्रेभ्यो नमः। श्री चारण ऋद्धिधारी सप्त परमर्षिभ्यो नमः। भूत–भविष्यत–वर्तमान काल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः।

ॐ ह्रीं श्रीमंतं भगवंतं कृपावंतं श्री वृषभादि महावीरपर्यंतं चतुर्विंशति तीर्थंकर परमदेवं आद्यानां आद्ये जम्बूद्वीपे भरत क्षेत्रे आर्यखण्डे भारत देशे..... प्रान्ते–नगरे..... मासानांमासे.....मासे.....पक्षे.....तिथौ.....वासरे मुनि आर्यिकाणां श्रावक श्राविकाणां, क्षुल्लक, क्षुल्लिकानां, सकल कर्मक्षयार्थं (जलधारा) जलादि महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(27 श्वासोच्छवास में 9 बार णमोकार मंत्र पढ़ें।)

शांतिपाठ (हिन्दी)

चौपाई

(शांतिपाठ बोलते समय पुष्पाञ्जलि क्षेपण करते रहें)

शशि सम निर्मल जिन मुखधारी, शील सहस्र गुणों के धारी।
लक्षण वसु शत त्रयपदधारी, कमल नयन शांति सुखकारी॥1॥

(नोट–यहाँ शांतिधारा करें।)

शांतिनाथ पंचम चक्रीश्वर, पूजें तुमको इन्द्र मुनीश्वर।
शांति करो हे शांति ! जिनेश्वर, जगत् शांतिहित नमते गणधर॥2॥

आठों प्रातिहार्य मनहारी, ये जिन वैभव हैं सुखकारी।
तरु अशोक पुष्पों की वर्षा, दिव्य ध्वनि सिंहासन रवि सा॥3॥

छत्र चँवर भामंडल चम–चम, देव–दुंदुभि बजती दुम–दुम।
शांति करो त्रय जग में स्वामी, शीश झुकाता तुमको स्वामी॥4॥

आप अनंत चतुष्टय धारी, मंगल द्रव्य आठ अघहारी।
सर्व विघ्न प्रभु आप नशाओं, हे शांति प्रभु ! शांति दिलाओ॥5॥
पूजक राजा शांति पायें, मुनि तपस्वी शांति पायें।
राष्ट्र नगर में शांति छाये, शांति जगत् में हे जिन ! आये॥6॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् (9 बार णमोकार मंत्र का जाप करें।)

(दोनों हाथ में चावल या पुष्प लेकर करबद्ध हो विसर्जन पाठ पढ़ें मंत्र के साथ पुष्पाञ्जलि करें)

विसर्जन पाठ

(दोहा)

जाने अनजाने हुई, प्रभु पूजा में चूक।
मैं अज्ञान अबोध हूँ, क्षमा करो सब चूक॥1॥
जानूँ नहीं आह्वान मैं, पूजा से अनजान।
ज्ञान विसर्जन का नहीं, क्षमा करो भगवान॥2॥
अक्षर पद और मात्रा, व्यंजनादि सब शब्द।
कम ज्यादा कुछ कह दिया, छूट गये हों शब्द॥3॥
मिथ्या हो सब दोष मम, शरण रखो भगवान।
तव पूजा करके प्रभु, बन जाऊँ भगवान॥4॥

ॐ आं क्रौं ह्रीं अस्मिन् नित्य पूजाभिषेक विधाने आगच्छत सर्वे देवाः स्वस्थाने गच्छतः-3जः-3स्वाहा।

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(9 बार णमोकार का जाप करें।)

(नोट-दीपक लेकर श्रीजी की मंगल आरती करें।)

(यह दोहा बोलते हुए आशिका ग्रहण करें)

दोहा : गंध पुष्प प्रभु रज यही, इसको शीश झुकाय।
पुष्प लिये आह्वान के, अपने शीश लगाय॥

(तुभ्यम् नमस्त्रि बोलते हुये भगवान को गुरु को नमस्कार करें।)

***

श्री धर्मतीर्थ प्रकाशन

अतिशय क्षेत्र धर्मतीर्थ, जिला औरंगाबाद (महाराष्ट्र) द्वारा

आर्ष मार्ग संरक्षक, कवि हृदय, प्रज्ञायोगी, दिगम्बर जैनाचार्य

श्री गुप्तिनंदी गुरुदेव ससंघ का प्रकाशित साहित्य

1. श्री रत्नत्रय आराधना
2. श्री लघु रत्नत्रय आराधना
3. श्री वृहद् रत्नत्रय विधान
4. श्री लघु रत्नत्रय विधान
5. श्री रत्नत्रय भक्ति संहिता
6. श्री रत्नत्रय संस्कार प्रवेशिका (भाग 1)
7. श्री रत्नत्रय संस्कार प्रवेशिका (भाग 2)
8. श्री वृहद गणधर वलय विधान
9. लघु गणधर वलय विधान
10. श्री वृहद नवग्रह शान्ति विधान
11. श्री सूर्यग्रह शान्ति विधान (श्री पद्मप्रभु आराधना)
12. श्री चन्द्रग्रह शान्ति विधान (श्री चन्द्रप्रभु आराधना)
13. श्री मंगलग्रह शान्ति विधान (श्री वासुपूज्य आराधना)
14. श्री बुधग्रह शान्ति विधान (श्री शांतिनाथ आराधना)
15. श्री गुरुग्रह शान्ति विधान (श्री आदिनाथ आराधना)
16. श्री शुक्रग्रह शान्ति विधान (श्री पुष्पदंत आराधना)
17. श्री शनिग्रह शान्ति विधान (श्री मुनिसुव्रतनाथ आराधना)
18. श्री राहूग्रह शान्ति विधान (श्री नेमिनाथ आराधना)
19. श्री केतुग्रह शान्ति विधान (श्री पार्श्वनाथ आराधना)
20. धर्मसूर्य श्री पद्मप्रभ-वासुपूज्य-नेमिनाथ विधान
21. श्री नवग्रह शान्ति चालीसा (बड़ी)
22. श्री नवग्रह शान्ति चालीसा (छोटी)
23. श्री पंचकल्याणक विधान
24. श्री त्रिकाल चौबीसी (लक्ष्मी प्राप्ति) रोट तीज विधान
25. श्री तीस चौबीसी (महालक्ष्मी प्राप्ति) विधान
26. श्री सर्व तीर्थंकर विधान
27. श्री विजय पताका विधान
28. श्री सम्मेद शिखर विधान
29. श्री पंच परमेष्ठी (सर्व सिद्धि) विधान
30. श्री विद्या प्राप्ति विधान
31. श्री श्रुत स्कन्ध विधान
32. श्री तत्त्वार्थ सूत्र विधान
33. श्री भक्तामर विधान
34. श्री कल्याण मंदिर विधान
35. श्री एकीभाव विधान
36. श्री विषापहार विधान
37. श्री णमोकार विधान
38. श्री जिन सहस्त्रनाम विधान
39. श्री चौबीस तीर्थंकर, लक्ष्मी प्राप्ति बाहुबली-धर्मतीर्थ एवं आचार्य गुप्तिनंदी विधान

40. श्री चन्द्रप्रभु विधान
41. श्री शान्तिनाथ विधान
42. श्री सर्व दोष प्रायश्चित्त विधान
43. श्री रविव्रत विधान
44. श्री पंचमेरु-दशलक्षण-सोलहकारण विधान
45. श्री नंदीश्वर विधान
46. श्री चन्दन षष्टी व्रत विधान
47. आचार्य शांतिसागर विधान
48. आचार्य श्री कुन्थुसागर विधान
49. आचार्य श्री कनककनंदी विधान
50. आचार्य श्री गुप्तिनंदी विधान
51. श्री छ्यानवे क्षेत्रपाल विधान
52. श्री भैरव पद्मावती विधान
53. श्री धर्मतीर्थ आरती संग्रह
54. सावधान (काव्य संग्रह)
55. महासती अंजना
56. कौडियो में राज्य
57. महासती मनोरमा
58. महासती चन्दनबाला
59. विलक्षण ज्ञानी (आचार्य श्री कनककनंदी जी चरित्र कथा)
60. वात्सल्य मूर्ति (गणिनी आर्यिका राजश्री माताजी स्मारिका)
61. धर्मतीर्थ प्रवेशिका (भाग-1)